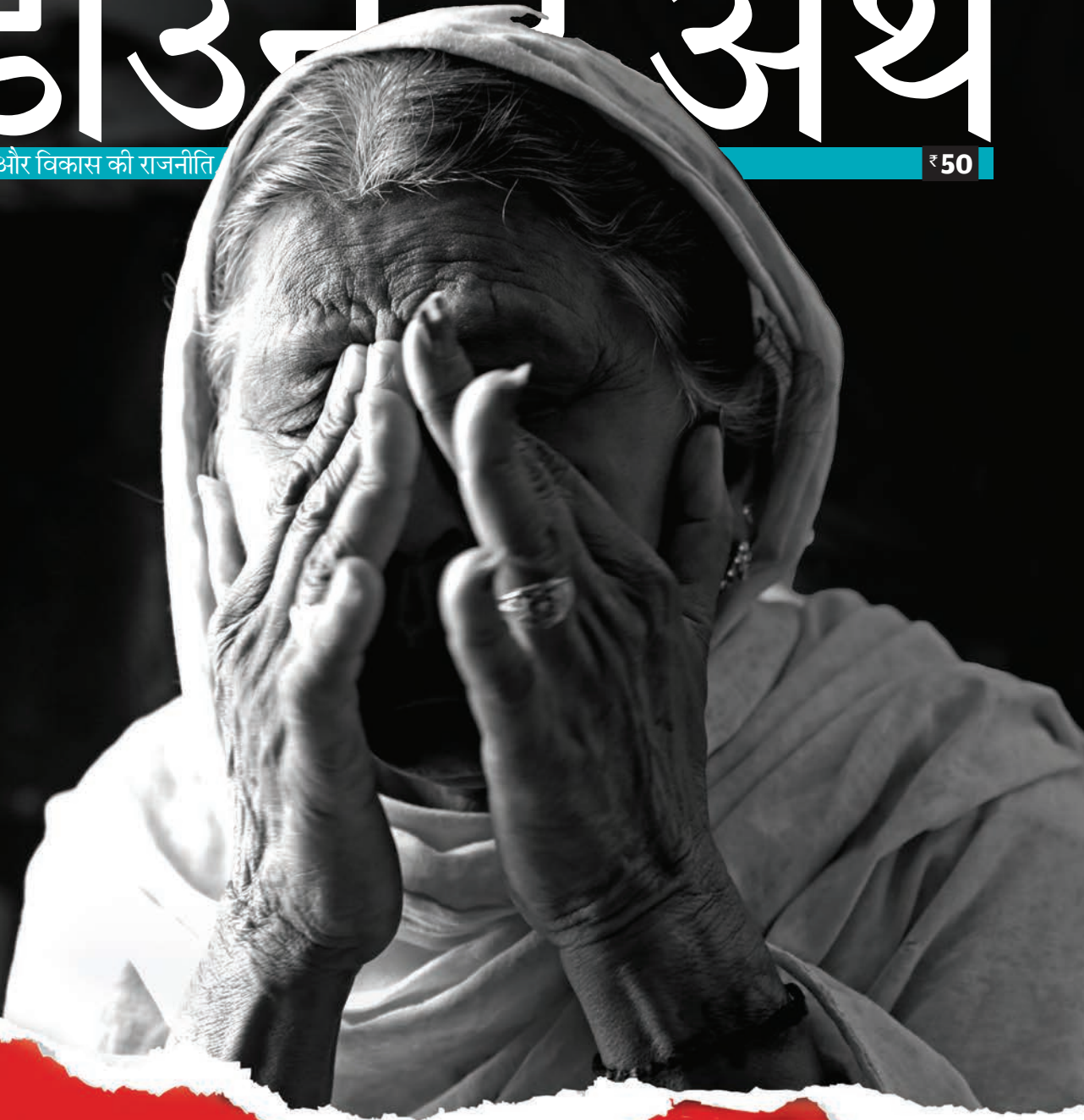


दिसंबर 2024

डाउन अर्थ

पर्यावरण और विकास की राजनीति

₹ 50



मोपाल गैस त्रासदी 40 साल

दुनिया की सबसे विध्वंसक औद्योगिक आपदा का आंखों देखा हाल

Down To Earth



gobar times

YOUNG

ENVIRONMENTALIST

young.downtoearth.org.in



Air & Mobility

Water

Climate Change

Waste

Food

Energy

Biodiversity

Etc



A website on
Environment and Development
for the Young and the Curious



अनायास नहीं है ट्रम्प 2.0

ट्रम्प अमेरिका के नए राष्ट्रपति हैं। एक ऐसा देश जो ग्रीनहाउस गैसों के मामले में विश्व का सबसे बड़ा उत्सर्जक और दूसरा सबसे बड़ा योगदानकर्ता है। राष्ट्रपति ट्रम्प घोषित रूप से जलवायु संशयवादी हैं। वह जीवाश्म ईंधन के मुखर समर्थक हैं और जलवायु संकट के वर्तमान परिदृश्य में उन्होंने वादा किया है कि पदभार ग्रहण करने के बाद वह यह सुनिश्चित करेंगे कि ऊर्जा की कीमतों में कटौती की जाए। ट्रम्प हरित ऊर्जा योजनाओं को रद्द कर देने के समर्थक हैं और वे चाहते हैं कि उद्योग “ड्रिल बेबी ड्रिल” के समय में वापस चले जाएं। इसका मतलब हुआ तेल और प्राकृतिक गैस की खोज के लिए और अधिक संघीय भूमि प्रदान करना और अपने देश के जीवाश्म ईंधन उद्योग पर कानूनी नियंत्रण को कम करना।

लेकिन जब मैं यह कहती हूँ, तो हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि वर्तमान राष्ट्रपति जो बाइडेन के कार्यकाल में अमेरिका जीवाश्म ईंधन की दुनिया का सम्राट रहा है और किसी भी अन्य देश की तुलना में अधिक तेल का उत्पादन कर रहा है। अमेरिका दुनिया का सबसे बड़ा तेल और गैस उत्पादक है और रूस से भी 40 प्रतिशत अधिक उत्पादन करता है। ऐसे में जब ट्रम्प कहते हैं कि वे जीवाश्म ईंधन की ओर वापस लौटेंगे तो हमें यह समझना चाहिए कि यह कितना बुरा होगा!

ट्रम्प ने बाइडेन प्रशासन की अक्षय ऊर्जा और इलेक्ट्रिक वाहन योजनाओं की भी तीखी आलोचना की है और उन्हें “उद्योगों को खत्म करने, नौकरी खत्म करने, चीनी समर्थक और अमेरिका विरोधी” कहा है। कुल मिलाकर वह अतीत के व्यवसायिक मॉडल की ओर वापस जाना चाहते हैं। इस विचार को पूरी तरह से खारिज करते हुए कि दुनिया आसन्न आपदा के कगार पर खड़ी है और हरित ऊर्जा की ओर जाना आवश्यक है।

तो सवाल यह है कि अमेरिका में जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए आगे क्या कदम उठाए जाएंगे? जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए दुनिया को एक साथ लाने वाले अंतर्राष्ट्रीय समझौतों का भविष्य क्या होने वाला है? हमें यह पूछने की जरूरत है क्योंकि इस बार ट्रम्प की जीत कोई संयोग नहीं है। 2016 में जब उन्हें राष्ट्रपति के रूप में चुना गया था तो अमेरिका और पूरी दुनिया उनके रुख को लेकर अनिश्चित थी कि वह किसके पक्ष में हैं और किसके खिलाफ। हममें से ज्यादातर लोगों को वह दिखावा लगा था। इस बार वह इस विश्वास के साथ सत्ता में आए हैं कि अमेरिका के लोग उन्हें उनके दृढ़ विचारों के कारण चाहते हैं। इसमें जलवायु परिवर्तन को लेकर उनका तीखा विरोध भी शामिल है। इसलिए हमें उनके कार्यों से आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए। इसके बजाय सवाल यह होना चाहिए कि दुनिया इस बेकाबू होती जा रही अस्तित्वगत समस्या से निपटने के लिए क्या कदम उठाती है।

यह सच्चाई है कि बाइडेन अपने देश के विशाल तेल और गैस उत्पादन के पाखंड के बावजूद जलवायु कार्रवाई के प्रति प्रतिबद्धता पर अपने सभी पूर्ववर्तियों से अलग हटकर खड़े थे। उन्होंने 2030 तक ग्रीनहाउस गैसों को 2005 के स्तर से 50-52 प्रतिशत कम करने के साहसिक लक्ष्य की घोषणा की। साथ ही 2035 तक 100 प्रतिशत कार्बन प्रदूषण मुक्त बिजली

प्राप्ति का लक्ष्य रखा। मुद्रास्फीति न्यूनीकरण अधिनियम (आईआरए) को स्वच्छ प्रौद्योगिकियों और हरित ऊर्जा में निवेश को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य हेतु शानदार ढंग से तैयार किया गया था। किसी भी अन्य चीज से ज्यादा अमेरिकी नेतृत्व का मतलब था कि अन्य देशों के पास छिपने के लिए कोई जगह नहीं थी। उन्हें ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लक्ष्य निर्धारित करने के लिए मजबूर किया गया और कुछ ठोस कार्रवाई भी की गई। यह कार्रवाई अपर्याप्त थी। लेकिन कहानी बदल रही थी।

सवाल यह भी है कि क्या ट्रम्प अपने देश को जलवायु परिवर्तन पर हुए वैश्विक समझौतों, 2015 पेरिस समझौते और जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन का सदस्य बने रहने देंगे? यह माना जा रहा है कि वह ऐसा नहीं करेंगे। यह सब डीकार्बोनाइजेशन और उस सहकारी समझौते के निर्माण के लिए वैश्विक इरादे को कमजोर करेगा जिसका उद्देश्य दक्षिण के देशों को मिटिगेशन और अनुकूलन के लिए वित्तीय सहायता देना है।

यह वह वास्तविकता है जिसका हमें सामना करना होगा। लेकिन यह स्पष्ट है कि यह सब ऐसे समय में होगा जब जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

बढ़ेंगे और अधिक से अधिक देशों में तबाही फैलेगी। लोग गरीब होते जाएंगे और इससे वैश्विक असुरक्षा बढ़ेगी। आज की दुनिया में अप्रवासन मजबूत नेताओं की ओर झुकाव का चालक है, ऐसे नेता जो अवैध लोगों को बाहर रखने का वादा करते हैं। जलवायु प्रभाव बढ़ने के साथ यह स्थिति और भी बुरी हो जाएगी। इस पतन से बचने के लिए हमें मिलकर काम करने की आवश्यकता है। वैश्विक नेतृत्व की आवश्यकता तो है ही, लेकिन साथ ही साथ ऐसी मजबूत आवाजों की भी जरूरत है, जो न केवल आसन्न विनाश के बारे में बल्कि चीजों को अलग तरीके से करने की संभावना के बारे में भी बोलें। यह उस आशा का संदेश है जिसकी हमें आज जरूरत है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि दुनिया कम कार्बन वाली अर्थव्यवस्था बनाने की अपनी यात्रा पर आगे बढ़ चुकी है और इसे इतनी आसानी से उलटा नहीं किया जा सकता। बैटरी और नवीकरणीय ऊर्जा सहित हरित प्रौद्योगिकियों में भारी निवेश किया गया है और अब इस नई अर्थव्यवस्था में रुचि बढ़ी है। लेकिन यह कहते हुए भी, हमने पर्यावरण के क्षेत्र में जिस तरह से अपने उद्देश्य की वकालत की है, उसमें एक नया बदलाव करने की जरूरत है। हमें जलवायु परिवर्तन से निपटने की लागत को समझने की जरूरत है। हमें हरित ऊर्जा क्षेत्र में नए तरीके अपनाने की जरूरत है, जो किफायती और समावेशी हो। और यह न केवल दक्षिण के देशों में बल्कि औद्योगिक उत्तर में भी करना होगा। यह वह सीख है जिसे हमें ट्रम्प के चुनाव से लेने की जरूरत है, यह स्पष्ट और जोरदार संकेत है और इसे अनदेखा करना हमारे भविष्य के लिए जोखिम भरा हो सकता है।

दुनिया को अमेरिका के राष्ट्रपति के रूप में डोनाल्ड ट्रम्प के कार्यों से आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए। इसके बजाय, हमें जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए कदम उठाने की आवश्यकता है।



योगेन्द्र आनंद / सीएसई

इस अंक में



18

आवरण कथा

40 साल पहले घटित भोपाल
गैस त्रासदी की आंखों देखी

11

चर्चा में

तेजी से घटी यूक्रेन
की आबादी



हुनर को पंख
बांदा का विलुप्तप्राय शजर
हस्तशिल्प लघु उद्योग पटरी पर

50



14

पंचायत के आसरे
सतत विकास लक्ष्यों का
दारोमदार ग्राम पंचायत पर

49 बैठे ठाले
वाह रे वारेन

56 विश्व बिरादरी
महिला आविष्कारकों
का कड़वा सच

58 अंततः
जड़ जमाती गरीबी

संस्थापक संपादक अनिल अग्रवाल

संपादक सुनीता नारायण

प्रबंध संपादक रिचर्ड महापात्रा

एसोसिएट संपादक अनिल अश्विनी शर्मा

सहायक संपादक भागीरथ

प्रमुख संपादक राजू सज्जान

सीनियर क्रिएटिव डायरेक्टर अजीत बजाज

रिपोर्टिंग टीम

विदेक मिश्रा, अक्षित संगोमला, श्मगुन,
रोहिणी कृष्णमूर्ति, हिमांशु नितनवर, पुलाहा रॉय

सूचना एवं शोध सहयोग किरण पांडे

www.indiaenvironmentportal.org.in टीम

कला संपादक चैतन्य चंदन

सहायक कला संपादक रितिका बोहरा

डिजाइन टीम

श्रीकृष्ण, योगेंद्र आनंद, तरुण सहगल, विनीत त्रिपाठी

फोटो एडिटर विकास चौधरी

हिंदी सहयोग

सुरेंद्र सिंह, जयदेव शर्मा, ललित मौर्य, दयानिधि मिश्रा

प्रोडक्शन राकेश श्रीवास्तव, गुंघर दास

संपादन परामर्श

अनुमिता रायचौधरी, विभा वाण्य

विज्ञापन संपर्क ज्योति घोष

jghosh@cseindia.org

सब्सक्रिप्शन संपर्क केशीआर राजा

raja@cseindia.org

वर्ष 7, अंक 3, कुल पृष्ठ 60

सम्पादकीय, सब्सक्रिप्शन और विज्ञापन: सोसायटी

फॉर एनवायरनमेंटल कम्युनिकेशंस, 41-तुंगलकाबाद

इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली-110062

फ़ोन: +91-11-29955124, 29956110,

29956394, 29956399

फ़ैक्स: +91-11-29955879

ई मेल: editor@downtoearth.org.in

© 2024 सोसायटी फॉर एनवायरनमेंटल कम्युनिकेशंस

सर्वाधिकार सुरक्षित (पूरे विश्व के लिए)। किसी भी प्रकार से पुनः

उत्पादन प्रतिबंधित। सोसायटी फॉर एनवायरनमेंटल कम्युनिकेशंस

के लिए रिचर्ड महापात्रा द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।

तारा आर्ट प्रिंटर्स प्राइवेट लिमिटेड, ए-46-47, सेक्टर-5,

नोएडा-201301, उत्तर प्रदेश से मुद्रित और 41-तुंगलकाबाद

इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली-110062 से प्रकाशित।

सब्सक्राइब करने के लिए फोन करें 011-4061 6000 पर

या लॉग इन करें www.downtoearth.org.in/subscribe

डाउन टू अर्थ संपादकीय पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की किसी भी विषयवस्तु का समर्थन नहीं करता है। सभी विवाद सिर्फ दिल्ली/नई दिल्ली के प्रतिस्पर्धी न्यायालय और फोरमों के विशिष्ट न्यायाधिकार का विषय है

चिह्नी पाती

मेरी जुबानी

...और कितना दूर जाएं



दिनेश समुद्र,
गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश

बीमारी ने कहर मचाया था। कहा गया था कि एक बीमार तो सब बीमार। कोरोना वाली स्थिति ही आज प्रदूषण की भी हो गई है। हम जहां भी जाते हैं हमारी जिंदगी के हिस्से की तरह हमारे साथ चला आता है।

मैं अपने कॉलेज के दिनों को याद करता हूं तो पता चलता है कि उस दौर में मैं (1995 से 1999) इस बात का बेसब्री से इंतजार करता था कि कब मेरी मेडिकल की पढ़ाई पूरी हो तो मैं गैस चैंबर बन चुकी दिल्ली के दमघोंटू वातावरण से निकल सकूँ। उस समय मेरा कॉलेज दिल्ली के आईटीओ इलाके के पास हुआ करता था। उस वक्त ही वायु प्रदूषण के हिसाब से इस इलाके को जहरीले का खिताब दिया जाता था। दिल्ली सपनों की नहीं काले धुएं का शहर थी। घर से आए रिश्तेदार कहते थे दिल्ली घूमने नहीं बुलाओगे तो एक उदासी सी छा जाती थी। लेकिन आखिर मेरे मन की मुराद पूरी हो गई।

डॉक्टर की पढ़ाई पूरी करने के बाद मैं अपने घर के पास नौकरी करने लगा। सबसे बड़ी तसल्ली इस बात की महसूस हुई कि दिल्ली की आबोहवा से छुटकारा मिला। लेकिन जल्दी ही मेरे घर के आसपास के इलाके की हालत भी दिल्ली जैसी ही हो गई।

वायु प्रदूषण का प्रकोप इतना बढ़ गया कि हमें घर के पास रहना भी दूबर लगने लगा। इसका कारण था प्रदूषण को खत्म करने का अनोखा तरीका। दिल्ली की आबोहवा को बचाने के लिए प्रदूषण फैलाने वाले कारखानों को मेरे शहर में

प्रदूषण एक ऐसा शब्द जो आज हमारी जिंदगी का वो असबाब बन गया है कि हम कहीं भी जाएं हमारी जरूरत की चीजों के साथ बिना जरूरत बंधा चला जाएगा। कुछ समय पहले कोरोना नाम की

स्थानांतरित कर दिया गया। तब इस बात का अहसास हुआ कि किसी भी तरह के आगे बढ़ने को विकास का नाम क्यों दिया गया? शायद इसलिए कि एक बार कदम आगे बढ़ाने के बाद यह विकास पीछे की तरफ नहीं लौटता है। जिन कारखानों की जरूरत हमने पैदा की थी, अब उन्हें खारिज नहीं कर सकते, चाहे हमारा अस्तित्व ही खारिज होने की कगार पर क्यों न पहुंच जाए।

अभी तक किताबों में गांवों का रंग गुलाबी ही बताया गया था। इसलिए हमने शहर को ही छोड़ने का फैसला किया। लेकिन अगर शहर का मतलब प्रदूषण था, तो वह अब भी नहीं छूटा। अब यहां भी वैसा ही हाल है जहां से भागे थे। आज मेरा पूरा परिवार ही प्रदूषण का मरीज है। इसके बारे में हमें मेडिकल कॉलेज में नहीं पढ़ाया गया था। कभी सोचा नहीं था कि डॉक्टर पढ़ने के बाद प्रदूषण से होने वाली बीमारी का इलाज नहीं खोज पाऊंगा।

देश की सीमा से भी भागने का कोई फायदा नहीं है। पड़ोसी देश की भी हालत उतनी ही खराब है, जितनी हमारी।

कोई किसानों को दोषी बता रहा, कोई पटाखे जलाने वालों को तो कोई किसी और को। लेकिन यह अभी तक नागरिक जमात में सिर्फ चर्चा तक ही रह जाता है। जैसे, हम लोगों से मिलते ही कहते हैं आज मौसम कितना अच्छा है, आज गर्मी कैसी है तो आज सर्दी कैसी है? अब कहते हैं कि ओह ये प्रदूषण कितना है।

प्रदूषण की हालत आपदा जैसी हो गई है और अफसोस यह है कि हम इसे कुदरती आपदा नहीं कह सकते जैसे उत्तराखंड या हिमाचल की आपदाओं में कह कर पल्ला झाड़ लेते हैं। अब भागने की हिम्मत भी खत्म हो चुकी है। क्या अब भी यह चर्चा का हिस्सा ही रहेगा। कोई अदृश्य सरकार ही इसका समाधान करेगी जबकि चुनावों में प्रदूषण के मुद्दे पर कोई बात भी नहीं करता है। हमारे बिस्तर तक साथ सोए प्रदूषण के बाद भी क्या हम जागेंगे?

यह पाठकों का मंच है। अपने विचार और सुझाव आप डाउन टू अर्थ के साथ साझा कर सकते हैं। हमें लिखें: editor@downtoearth.org.in

बेहद उपयोगी

मैं आपकी डाउन टू अर्थ का नियमित पाठक हूँ। आप डाउन टू अर्थ की वेबसाइट एवं पत्रिका के माध्यम से देश भर के विभिन्न मुद्दों से संबंधित जो भी जानकारी प्रदान करते हैं, वह अपने आप में बेहद उपयोगी होने के साथ ही भारतीय समुदाय के प्रत्येक नागरिक के लिए लाभदायक भी होती है। आपके द्वारा प्रकाशित वेबसाइट एवं पत्रिका में उच्च गुणवत्ता के लेख शामिल होते हैं और वह समाज हित में विभिन्न मुद्दों पर एक सार्थक चर्चा को जन्म देने और लोगों में एक प्रकार की सकारात्मक समझ बनाने में सक्षम होते हैं।

पंकज सिंह बिष्ट, नैनीताल, उत्तराखण्ड

जीवन से जुड़ गई है अब पत्रिका

पहले डाउन टू अर्थ पत्रिका के एक-दो अंक पीडीएफ के रूप में देखे थे किन्तु अंक हाथ में न आने के कारण निराश और विवश था। इस बार इसका सितंबर 2024 का अंक पाकर गदगद हूँ। निःसंदेह हिन्दी में विज्ञान विषय की यह उत्कृष्ट पत्रिका है। इस अंक में चर्चा में, आपदा, पहल, जलवायु, आवरण कथा, वायु प्रदूषण, आहार संस्कृति आदि उपशीर्षकों में ज्ञान-विज्ञान की उपयोगी सामग्री दी गई है। बैठे-ठाले स्तंभ के अंतर्गत दास्तान-ए-मिडिल क्लास धीरे-धीरे पूरा पढ़ गया। इसमें बड़े रोचक ढंग से आम आदमी की व्यथा कथा पिरोई गई है। शेष सामग्री कई बार में पढ़ने के लिए पत्रिका रख ली है। मुझे पत्रिका बहुत पसंद आई है। इसके संपर्क में देर से आ पाया हूँ, इस बात का पश्चाताप है। मैंने इसके एक वर्ष के पुराने अंक मूल्य देकर प्राप्त करने हेतु दिए गए लैंडलाइन नंबरों पर संपर्क करने का प्रयास किया, किन्तु कोई प्रत्युत्तर नहीं मिल सका। इसमें कम से कम एक मोबाइल नंबर देना चाहिए, जिससे संपर्क किया जा सके। अभी एक वर्ष की सदस्यता ली है। लगता है कि यह अब जीवन से जुड़ी रहेगी। एक निवेदन यह भी है कि पत्रिका में एक-दो विज्ञान कविताओं को भी स्थान देने का कष्ट करें, जिससे रोचकता में वृद्धि के साथ विज्ञान-कवियों को भी सम्मानित मंच मिल सकेगा। जुड़ी ज्ञान-विज्ञान से, है डाउन टू अर्थ। इसके नियमित पठन से, पाठक बने समर्थ।

गौरीशंकर वैश्य विनम्र, लखनऊ, उत्तर प्रदेश



उत्तर

आपका पत्र मिला धन्यवाद। आपके सुझावों पर हम गंभीरता पूर्वक विचार करेंगे।

संपादक

विशेष अंक जरूरी

डाउन टू अर्थ का नवंबर का अंक प्राप्त हुआ। मुझे यह कहने में रतीभर संकोच नहीं हो रहा है कि आपके संपादकीय टीम ने पिछले तीन माहों में जो लगातार स्पेशल अंक निकाले हैं, वह हम जैसे छात्रों के लिए कितने उपयोगी हैं। एक तो सबसे अच्छी बात यह है कि ऐसे अंक बहुत संग्रहणीय होते हैं। और सालों तक हम उनका संदर्भ के रूप

डाउन टू अर्थ

पत्रिका के बारे में अपने सुझाव आप इस पते पर भेज सकते हैं-

सुनीता नारायण,
संपादक, डाउन टू अर्थ,
41, तुगलकाबाद इंस्टीट्यूशनल एरिया,
नई दिल्ली-110062

आप हमें ई मेल भी कर सकते हैं:
editor@downtoearth.org.in

में उपयोग करते रहते हैं। फिर आपकी पत्रिका की सबसे अच्छी बात है कि आप अपने पाठकों को लगातार अपडेट करते रहते हैं। इससे हमें इधर-उधर दूसरी पत्रिका को ताकने की जरूरत नहीं पड़ती है। यहां तक हम ही दूसरों को पत्रिका का संदर्भ दे देते हैं, यह कहते हुए कि अरे भाई इसे पढ़ लो अब और कहीं पढ़ने की जरूरत नहीं है। उम्मीद करता हूँ कि आगामी जनवरी अंक अवश्य विशेष अंक होगा। जैसा कि अब तक आपकी संपादकीय टीम करती आई है। हमें उस अंक का बेसब्री से इंतजार है और अक्सर आने वाला अंक हमारे द्वारा की गई कल्पनाओं से परे ही होता है।

श्याम मिश्रा, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश

पाठक की फिफ्ट

डाउन टू अर्थ पत्रिका के हर अंक में इस बात की जरूर फिफ्ट होती है कि उनके पाठक को क्या अच्छा लग रहा है और क्या बुरा। यही कारण है कि पत्रिका को पढ़ने वालों की संख्या जहां तक मेरे हिसाब से लगातार बढ़ रही है। भले ही इसकी रफ्तार धीमी हो। हालांकि मैं कोई इस पत्रिका की प्रसार संख्या का लेखाजोखा देने के लिए नहीं बैठा हूँ लेकिन मैं बस अपने आसपास के लोगों को देख कर ही इस बात का अंदाजा लगा रहा हूँ। कारण कि आज से चार साल पहले जब मैंने इस पत्रिका को पहली बार बुक स्टॉल से खरीदा था तब उस दुकानदार के पास केवल 10 कॉपी आती थी लेकिन अब देख रहा हूँ कि उसकी संख्या 27 पहुंच चुकी है। यही नहीं मैं भी जब सही समय पर नहीं पहुंच पाता तो मैं भी उस माह के अंक से महरूम हो जाता हूँ। फिर किसी से मांग कर ही पढ़ पाता हूँ। आपके संपादकीय टीम द्वारा तैयार लेखों में विशेषतौर पर देखा जाता है कि हर आलेख में कही गई बात तथ्य और आंकड़ों के बिना पर होती है। अंत में यह जानना चाहता हूँ कि यदि पुराने अंक मुझे चाहिए तो क्या करना होगा।

आलोक कुमार, वाराणसी, उत्तर प्रदेश

उत्तर

आपका पत्र मिला धन्यवाद। आपकी बात हमने अपने प्रसार विभाग तक पहुंचा दी है। शीघ्र ही वे आपसे संपर्क करेंगे।

संपादक

यहां भी हमसे जुड़े रहिए

@down2earthHindi |

www.hindi.downtoearth.org.in

@hindidown2earth

www.youtube.com/@DownToEarthHindi-zr9oe

वक्तव्यों से परे...

पर्यावरण और विकास पर भारत की प्रतिष्ठित पत्रिका अब डिजिटल स्वरूप में भी



पर्यावरण और विकास से जुड़े मुद्दों को समर्पित पत्रिका 'डाउन टू अर्थ' के 25 साल पूरे होने पर हमने इसके हिंदी संस्करण की शुरुआत की थी। यह नई पत्रिका विकास, पर्यावरण और स्वास्थ्य की राजनीति से संबंधित ऐसी जमीनी रिपोर्ट, खबरें और तथ्यपूर्ण लेख आप तक पहुंचा रही है जो आपके लिए सबसे ज्यादा मायने रखते हैं।

'डाउन टू अर्थ' के अंग्रेजी संस्करण की तरह ही हिंदी पत्रिका भी केंद्र और राज्य सरकारों के नीति निर्धारकों को व्यापक जन हित में फैसले लेने के लिए बाध्य कर रही है। पत्रिका में पर्यावरण से जुड़े साहित्य, लोक संस्कृति और इतिहास से संबंधित सामग्री को भी जगह दी जा रही है। हमें आपको यह बताते हुए हर्ष हो रहा है कि आपकी चहेती पत्रिका अब डिजिटल स्वरूप में भी आपके लिए उपलब्ध है।

'डाउन टू अर्थ' हमारे सरोकारों और जुनून का नतीजा है। हमारा लक्ष्य आप तक उन मुद्दों को पूरे तथ्यों के साथ पहुंचाना है, जो हमारे वर्तमान और भविष्य पर असर डालते हैं। इस मुहिम में हमें आपके सहयोग की जरूरत है। आपसे अनुरोध है कि आप 'डाउन टू अर्थ' के हिंदी संस्करण को हर महीने खरीदकर हिंदी में पर्यावरण और विकास को समर्पित स्वतंत्र पत्रकारिता को सहयोग प्रदान करें।

डाउन टू अर्थ

सब्सक्रिप्शन फार्म

सब्सक्राइबर का नाम: श्री/श्रीमती/सुश्री _____ संस्थान: _____
पता: कार्यालय ☐ निवास ☐ _____ राज्य: _____ पिन कोड
फोन/मोबाइल: ☐ कार्यालय ☐ निवास _____ फ़ैक्स: _____ ईमेल: _____
मैं इस आवेदन के साथ रुपये _____ ☐ नकद / ☐ मनी ऑर्डर/चेक/डिमांड ड्राफ्ट के माध्यम से भुगतान कर रहा हूँ। कृपया मुझे डाउन टू अर्थ के प्रिंट/डिजिटल/प्रिंट एवं डिजिटल दोनों के लिए सब्सक्रिप्शन प्रदान करें।
चेक/डिमांड ड्राफ्ट संख्या तिथि _____ (चेक/डिमांड ड्राफ्ट Society for Environmental Communications के नाम नई दिल्ली में भुगतान होगा)

	केवल डिजिटल	सर्वश्रेष्ठ उपलब्धता - प्रिंट, डिजिटल और आर्काइव्स (ऑफर सीमित अवधि के लिए)
डाउन टू अर्थ पत्रिका हर महीने	☒	☒
डाउन टू अर्थ डिजिटल हर महीने	☒	☒
डाउन टू अर्थ (हिंदी) निशुल्क डिजिटल आर्काइव	☒	☒
1 वर्ष का सब्सक्रिप्शन (12 अंक)	₹600/- ₹180/- (70% की छूट)	₹600/- ₹360/- (40% की छूट)
2 वर्ष का सब्सक्रिप्शन (24 अंक)	₹1,200/- ₹330/- (72% की छूट)	₹1,200/- ₹660/- (45% की छूट)
3 वर्ष का सब्सक्रिप्शन (36 अंक) बेस्ट ऑफर	₹1,800/- ₹450/- (75% की छूट)	₹1,800/- ₹900/- (50% की छूट)
SOE वार्षिक अंक (केवल प्रिंट और केवल डिजिटल सब्सक्राइबर्स के लिए)	अतिरिक्त (वास्तविक मूल्य पर)	अतिरिक्त (वास्तविक मूल्य पर)

पत्रिका मंगाने के लिए कॉल करें 011-40616000 (एक्सटेंशन-234) या ईमेल करें dte@cseindia.org

पूरी तरह से भरे हुए सब्सक्रिप्शन फार्म यहां भेजें: सोसायटी फॉर एन्वायरॉन्मेंटल कम्यूनिकेशंस, 41-तुगलकाबाद इंस्टीट्यूशनल एरिया, नई दिल्ली-110062

अधिक जानकारी के लिए लॉग ऑन करें csestore.cse.org.in

बात निकललेगी तो...

“अब जल टैक्सी से 17 मिनट में पहुंचेंगे एयरपोर्ट”

नितिन गडकरी

केंद्रीय सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्री



क्या कहा

केंद्रीय सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्री नितिन गडकरी ने कहा कि जल टैक्सी सेवा से लोग मुंबई में कहीं से भी नवी मुंबई अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे तक 17 मिनट में पहुंच सकेंगे। गडकरी ने यह बात 18 नवंबर 2024 को महाराष्ट्र में एक चुनावी रैली में कही। 2014 में केंद्रीय शिपिंग मंत्रालय ने दिल्ली में यमुना नदी पर यमुना वाटर-टैक्सी का प्रस्ताव लाया था। तब गडकरी ने कहा था, “राजधानी में यह योजना उपयोगी साबित होगी।” लेकिन एक दशक बाद भी यह योजना अब तक फलीभूत नहीं हुई।

विगत

नवी मुंबई को मुंबई से जोड़ने वाली यह जल टैक्सी योजना कोई पहला उदाहरण नहीं है। इसके पहले 2021 में सिडको वाटर टैक्सी मुंबई शहर में प्रस्तावित हुई थी। इसके अलावा 1996 में सिडको ने महिंद्रा एंड महिंद्रा और आईएल एंड एफएस के साथ जुहू चौपाटी और बेलापुर से मुंबई से जुड़ी होवरक्राफ्ट सेवाएं शुरू की थीं। तब टिकटों की कीमत 100 रुपए प्रति ट्रिप थी जो बहुत अधिक मानी गई। ऐसे में 1998 में घाटे के कारण इस परियोजना को बंद कर दिया गया था।

हकीकत

2017 में केंद्रीय शिपिंग मंत्रालय ने यमुना जलमार्ग को नौपरिवहन की दृष्टि से उपयोगी घोषित किया था। लेकिन भारतीय जलमार्ग विकास प्राधिकरण की 2020 में प्रकाशित रिपोर्ट राष्ट्रीय जलमार्गों के विकास की कार्य योजना के अनुसार, यमुना जलमार्ग को यात्री व माल ढुलाई के वास्ते व्यावहारिक नहीं पाया गया। यहां तक दिल्ली के पर्यटन विभाग ने भी माना कि यमुना में वाटर-टैक्सी चलाने की योजना व्यावहारिक नहीं है। नदी की गंदगी, प्रदूषण और जगह-जगह पर नदी में पर्याप्त गहराई न होने के कारण भी इसे वाटर-टैक्सी योजना के अनुकूल नहीं माना जा सकता।

चर्चा में

नदी

महाकुंभ में गंगा के मलजल में कैसे लगेगी डुबकी ?

बिना उपचार के ही लगभग 128 एमएलडी सीवेज सीधे गंगा नदी में जा रहा है



प्रयागराज में 13 जनवरी, 2025 से शुरू होने वाले महाकुंभ की तैयारियां जोर-शोर से जारी हैं। हालांकि, इसमें एक सबसे अहम चीज की अनदेखी जारी है और वह है सीधे गंगा में गिरने वाले सीवेज (मलजल) की। स्थिति यह है कि गंगाजल आचमन लायक नहीं है। यानी वह श्रद्धालु जो प्रयाग की गंगा में स्नान करके अपने आप को शुद्ध मान रहे हैं, दरअसल वह जाने-अनजाने शहर के मलजल से ही स्नान कर रहे हैं।

नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल गंगा नदी के प्रदूषण नियंत्रण, रोकथाम और उपचार के मुद्दे पर गंगा

राज्यों और उनके जिलों की सुनवाई कर रही है। सुनवाई के दौरान उत्तर प्रदेश सरकार की रिपोर्ट के मुताबिक प्रयागराज नगर में रोजाना 468.28 मिलियन लीटर प्रति दिन एमएलडी सीवेज उत्पन्न हो रहा है, जबकि सीवेज उपचार की क्षमता केवल 340 एमएलडी है। इसका मतलब है कि रोजाना 128.28 एमएलडी सीवेज का उपचार नहीं हो रहा और सीधे गंगा नदी में गिर रहा है। रिपोर्ट के अनुसार कुल 11 गंगा जिलों में मौजूद 41 एसटीपी में से 6 बंद पड़े हैं। यह हैरानी भरा है कि 35 एसटीपी मानकों पर काम नहीं कर रहे हैं।

जंगल

उत्सर्जन जारी रहा तो शमशीतोष्ण वर्षावन हो जाएंगे खत्म

इंग्लैंड के लीड्स विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं कहा है कि 2100 में लगभग दो-तिहाई वर्षावन नष्ट हो जाएंगे



यदि ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन की वर्तमान गति जारी रही तो 68 प्रतिशत शमशीतोष्ण वर्षावन नष्ट हो जाएंगे। कनाडा, अमेरिका, चिली, जापान, ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड और इंग्लैंड में समशीतोष्ण वर्षावन पाए जाते हैं। इंग्लैंड में लीड्स विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं ने कहा है कि 2100 तक लगभग दो-तिहाई वन नष्ट हो जाएंगे। शोध में बताया गया है कि कुछ क्षेत्रों में वन क्षेत्र 90 प्रतिशत तक कम हो सकता है।

अध्ययन में कहा गया है कि शमशीतोष्ण वर्षावन दुर्लभ पारिस्थितिकी तंत्र हैं जो केवल गीले और ठंडे क्षेत्रों में पाए जाते हैं, जिससे वे गर्म जलवायु के प्रति संवेदनशील हो जाते हैं। उन्हें संरक्षित करना महत्वपूर्ण है क्योंकि वे दुर्लभ प्रजातियों को पनाह और उच्च मात्रा में कार्बन संग्रहीत कर सकते हैं। यह वन प्रणालियां ठंडी और नम जलवायु पर निर्भर करती हैं, जो विश्व स्तर पर दुर्लभ हैं और जलवायु परिवर्तन से खतरे में भी हैं। शमशीतोष्ण वर्षावन पृथ्वी की सतह के एक प्रतिशत से भी कम क्षेत्र में फैले हुए हैं और वैश्विक वन क्षेत्र का लगभग 2.5 प्रतिशत हिस्सा हैं। “स्कूल ऑफ अर्थ एंड एनवायरनमेंट” के प्रमुख लेखक बेन सिल्वर ने कहा, “अनियंत्रित जलवायु परिवर्तन विश्व स्तर पर समशीतोष्ण वर्षावनों के लिए एक आपदा है, क्योंकि वे गर्मियों के उच्च तापमानों को सहन नहीं कर सकते हैं।

जैव विविधता

मछली की नई प्रजातियों की खोज

भारत में शोधकर्ताओं ने पूर्वी घाट से मोटे पानी की मछली की एक नई प्रजाति “कोइमा” की खोज की है। यह खोज विशेष रूप से इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि दुनिया भर में नई प्रजातियों की खोज लगातार हो रही है, लेकिन नामकरण में एक नई प्रजाति का जुड़ना तुलनात्मक रूप से एक दुर्लभ घटना है। मेसोमोमेचेलस रेमाडेवी और नेमाचेलस मोनिलिस नामक इन मछलियों का नाम बदलकर अब कोइमा रेमाडेवी और कोइमा मोनिलिस कर दिया गया है। यह एक छोटी, लंबी और मोटे पानी की मछली जिसका उपयोग आहार के लिए किया जाता है। मछली की दोनों प्रजातियां कावेरी नदी की सहायक नदियों में पाई जाती हैं।

शोध में इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि पश्चिमी घाट की जैव विविधता अद्वितीय है और अभी भी यहां खोज के लिए बहुत कुछ है। इस क्षेत्र से और अधिक मछली की प्रजातियों की खोज की संभावना बनी हुई है और पश्चिमी घाट की सुरक्षा और संरक्षण के लिए यह महत्वपूर्ण बात है। कोइमा मोनिलिस आमतौर पर तेज बहने वाली धाराओं में निवास करती है। शोधकर्ताओं ने बताया कि यह प्रजाति 350 से 800 मीटर की ऊंचाई वाले क्षेत्रों में पाई जाती है।

वन्य जीव

जंगली हाथियों से जूझते किसान

खरीफ की फसल आमतौर पर जून का मौसम होता है, लेकिन ओडिशा के ग्रामीणों के लिए यह विनाश का खतरा बनकर आता है। हर साल झारखंड, पश्चिम बंगाल और छत्तीसगढ़ से जंगली हाथी पकती फसलों और सिकुड़ते आवासों की वजह से राज्य की सीमा में घुस आते हैं।

पड़ोसी राज्यों से हाथियों के पलायन के कारण ओडिशा में मानव-हाथी संघर्ष तेजी से बढ़ रहा है। 2024 के अक्टूबर तक ओडिशा में 76 जंगली हाथियों की मौत हो चुकी है और 2019 से अक्टूबर 2024 के बीच मानव-हाथी संघर्ष के दौरान 755 लोगों की मौत हो चुकी है। 2024 में राज्य में कराई गई हाथी जनगणना के अनुसार, 38 वन प्रभागों में 2,098 हाथी दर्ज किए गए थे, जबकि 2017 में हाथियों की संख्या 1,976 थी। यह 2024 के मुकाबले 122 अधिक है।



जैव विविधता

चरम मौसम के कारण पक्षियों की मौतें

सांभर झील में उच्च तापमान और कम लवणता ने एवियन बोटुलिज्म बीमारी के लिए अनुकूल परिस्थितियां पैदा की हैं, जिसके परिणामस्वरूप राजस्थान में आए प्रवासी पक्षियों की बड़ी संख्या में मृत्यु हुई है। 2024 में नवंबर के शुरू में ही कम से कम 600 प्रवासी पक्षियों की मृत्यु हो गई थी। यह जानकारी सेंटर फॉर एवियन रिसर्च इंस्टीट्यूट द्वारा गई थी। इनकी सूचना के अनुसार पक्षियों की मौतें 26 अक्टूबर, 2024 से शुरू हुईं और लगभग दो सप्ताह तक जारी रहीं।

इंग्लैंड स्थित वाइल्डफॉल एंड वेटलैंड्स ट्रस्ट ने पाया है कि उच्च तापमान, कम ऑक्सीजन स्तर और जैविक पोषक तत्वों की प्रचुरता जैसी स्थितियां पक्षियों में बीमारी के प्रकोप में महत्वपूर्ण योगदान कर सकती हैं। भारत मौसम विज्ञान विभाग (आईएमडी) ने बताया कि सांभर झील से लगभग 70 किलोमीटर दूर जयपुर जिले में पूरे अक्टूबर 2024 के दौरान औसत से अधिक तापमान रिकॉर्ड किया गया।

आधिकारिक रिकॉर्ड के अनुसार, 2024 के 1 से 31 अक्टूबर तक इस क्षेत्र में अधिकतम तापमान लगातार सामान्य से 1 से 5.1 डिग्री सेल्सियस अधिक रिकॉर्ड किया गया। इसी अवधि के दौरान न्यूनतम तापमान भी सामान्य से अधिक रहा, जिसमें 1.9 से 7.1 डिग्री सेल्सियस तक की वृद्धि हुई।

सांभर एक खारे पानी की झील है, इसलिए अक्टूबर में बारिश की कमी के कारण इसमें ऑक्सीजन का स्तर कम हो सकता है। आईएमडी के अनुसार, “अक्टूबर में अपेक्षित बारिश, जो औसतन 13.7 मिलीमीटर होती है, बिल्कुल भी दर्ज नहीं की गई। बारिश नहीं हुई है, यही कारण है कि दिन और रात का तापमान अधिक रहा।”

बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी (बीएनएचएस) में वेटलैंड्स और फ्लाईवे प्रोग्राम के उप निदेशक और प्रमुख पी सत्यसेल्वम ने सुझाव दिया कि पानी की गुणवत्ता में अचानक बदलाव से

यह प्रकोप शुरू हो सकता है। उन्होंने बताया, “सांभर झील एक खारी झील है और ऐसा लगता है कि इसमें ताजे पानी का प्रवाह पानी की गुणवत्ता को बदल रहा है।” आईएमडी के अनुसार, अकेले जयपुर जिले में मॉनसून के दौरान बहुत अधिक बारिश हुई, जून और सितंबर के बीच अनुमानित औसत 524.3 मिमी के मुकाबले 986 मिमी बारिश दर्ज की गई। उन्होंने *डाउन टू अर्थ* को बताया, “ताजे पानी की वजह से झील में खारापन कम हो सकता है। एक और कारण यह है कि प्रवासी पक्षी जब आते हैं तो महीनों की यात्रा से थके होते हैं।

सत्यसेल्वम ने कहा कि यात्रा या कम प्रतिरक्षा के कारण कमजोर हुए पक्षी एवियन बोटुलिज्म जैसी खतरनाक बीमारियों के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं। उन्होंने कहा, “इस बीमारी का कोई इलाज नहीं है, लेकिन प्रभावित पक्षियों को तुरंत हटाने और उनका निपटान करने की सलाह अवश्य दी जाती है।” उन्होंने कहा कि ऑस्ट्रेलिया और अमेरिका में भी लवणता के स्तर में गिरावट के दौरान इसी तरह के कई मामले सामने आए हैं। 2019 में भी सांभर झील में इस बीमारी की सूचना मिली थी, जिससे सामूहिक रूप से लगभग 18,000 पक्षियों की मौत हो गई थी। बीएनएचएस ने कहा कि इस तरह के प्रकोपों की भविष्यवाणी करना चुनौतीपूर्ण है और इस स्थिति में उच्च से निम्न लवणता में बदलाव प्रवासी पक्षियों के आगमन के साथ हुआ, जिसने बैक्टीरिया के विकास को बढ़ावा दिया।

जनसंख्या

यूक्रेन की आबादी में बड़ी गिरावट

यूक्रेन में जनसंख्या संकट एक प्रमुख चिंता का कारण बन गया है। देश को इस समय दो मोर्चों पर लड़ाई का सामना करना पड़ रहा है। पहला अपनी संप्रभुता की रक्षा करना और दूसरा अपनी भावी पीढ़ियों की सुरक्षा करना। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष (यूएनएफपीए) के अनुसार 2014 में जब रूस ने पहली बार क्रीमिया पर कब्जा किया था, तब से अब तक यूक्रेन की जनसंख्या में एक करोड़ से अधिक की गिरावट दर्ज की गई है। रूस के साथ चल रहे संघर्ष ने यूक्रेन में पहले से मौजूद जनसांख्यिकीय चुनौतियों को बढ़ा दिया है। युद्ध के कारण 86 लाख यूक्रेनियनवासी देश छोड़कर भाग गए हैं। यूक्रेन बिजनेस न्यूज की रिपोर्ट के अनुसार यूक्रेनी इंस्टीट्यूट ऑफ द फ्यूचर का अनुमान है कि देश का कार्यबल अब लगभग 95 लाख रह गया है। केवल 60 से 70 लाख लोग ही शेष आबादी का भरण-पोषण करते हैं। वृद्ध होती आबादी अतिरिक्त चुनौतियां पैदा कर रही है। पूर्वानुमानों के अनुसार 2052 तक पेंशनभोगियों की संख्या कामकाजी उम्र के व्यक्तियों से दो गुना अधिक हो सकती है। संस्थान ने चेतावनी दी है कि जब तक यूक्रेन की जनसंख्या प्रवृत्तियों पर ध्यान नहीं दिया जाता, तब तक पुनर्निर्माण के लिए आवश्यक सकल घरेलू उत्पाद उत्पन्न करने के लिए संघर्ष करना पड़ेगा।



जलवायु

वायुमंडल में सीओटू उत्सर्जन बढ़ा

जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन के 29वें सम्मेलन (सीओपी 29) के दौरान जारी किए गए वैश्विक कार्बन बजट (जीसीबी) के अनुसार, 2024 के लिए कुल कार्बन डाइऑक्साइड (सीओटू) उत्सर्जन 41.6 बिलियन टन होने का अनुमान है। यह पिछले साल के 40.6 बिलियन टन से अधिक है।

वैश्विक कार्बन बजट के अनुसार इस साल जीवाश्म और भूमि-उपयोग परिवर्तन दोनों में सीओटू उत्सर्जन की वृद्धि होने वाली है। सूखे की स्थिति के कारण 2023-2024 की अल नीनो जलवायु घटना के दौरान वनों की कटाई और वन क्षरण की आग से उत्सर्जन और अधिक बढ़ सकता है। विश्व मौसम विज्ञान संगठन के अनुसार, “वर्तमान में हर साल 40 बिलियन टन से अधिक उत्सर्जन के साथ वातावरण में सीओटू का स्तर लगातार बढ़ रहा है, जो तेजी से खतरनाक ग्लोबल वार्मिंग को बढ़ावा दे रहा है।” संगठन के अनुसार 2023 में ग्रीनहाउस गैस सांद्रता भी रिकॉर्ड स्तर पर पहुंच गई है। संगठन का अनुमान है कि 2024 रिकॉर्ड स्तर पर सबसे गर्म वर्ष होने वाला है, जो अस्थायी रूप से पूर्व-औद्योगिक युग से 1.5 डिग्री सेल्सियस अधिक हो जाएगा।

वायुमंडल में सीओटू का लंबा जीवनकाल आने वाली पीढ़ियों के लिए तापमान वृद्धि को रोकता है। जब तक सीओटू शून्य तक नहीं पहुंच जाता, तब तक दुनिया का तापमान बढ़ता ही रहेगा और तेजी से गंभीर प्रभाव पैदा करेगा, जैसा कि 2024 और हाल के वर्षों में लगातार देखा गया है।

कृषि

वायदा कारोबार निलंबन से बढ़ी महंगाई

क्या 2021 में चना, गेहूं, धान, मूंग, कच्चा पाम तेल व सरसों और सोयाबीन जैसे सात कृषि उत्पादों की बढ़ती कीमतों पर अंकुश लगाने के लिए वायदा कारोबार (फ्यूचर डेरिवेटिव्स ट्रेडिंग) को निलंबन किया जाना सरकार का एक बेहतर निर्णय था?

इस मामले पर दो प्रमुख प्रबंधन संस्थानों के द्वारा किया गया ताजा अध्ययन यह बताता है कि सरकार का यह निर्णय न सिर्फ इन कृषि उत्पादों की कीमतों में अस्थिरता पैदा करता है बल्कि इसके चलते कृषि उत्पादों का मूल्य तय करने में कठिनाई आती है। कुल मिलाकर यह सरकार की सोच के विपरीत महंगाई की रोकथाम के बजाए उस पर उल्टा असर डाल रहा है। यह ताजा अध्ययन बिरला इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट टेक्नोलॉजी, नोएडा और आईआईटी बॉम्बे के शैलेश जे. मेहता स्कूल ऑफ मैनेजमेंट ने किया है। अध्ययन में पाया गया कि कृषि उत्पादों के वायदा कारोबार यानी भविष्य अनुबंधों (फ्यूचर डेरिवेटिव्स) के निलंबन का असर यह है कि ये कृषि मूल्य व्यवस्था को पूरी तरह से गड़बड़ कर देता है, जिससे खाद्य कीमतों में अस्थिरता बढ़ती है और किसानों और कृषि मूल्य श्रृंखला के अन्य हिस्सों को भारी नुकसान होता है।

कमोडिटी डेरिवेटिव्स यानी भविष्य अनुबंध वह वित्तीय उपकरण होते हैं जिनके जरिए किसानों और व्यापारियों को कृषि उत्पादों की कीमतों में उतार-चढ़ाव से बचने का अवसर मिलता है। यह एक प्रकार का सुरक्षा कवच यानी हेज प्रदान करते हैं, जिससे वे भावी कीमतों के बारे में अनुमान लगाकर अपने निवेश की सुरक्षा कर सकते हैं। जब इन अनुबंधों को निलंबित कर दिया जाता है, तो इसका सीधा असर मूल्य निर्धारण और मूल्य स्थिरता पर पड़ता है।

बिरला इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट टेक्नोलॉजी ने 2016 से 2024 के बीच सरसों, सोयाबीन, सोयाबीन तेल और सरसों के तेल के व्यापार डेटा का

विश्लेषण किया।

अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला कि जब इन कृषि उत्पादों के लिए एक्सचेंज-ट्रेडेड कमोडिटी डेरिवेटिव्स निलंबित कर दिए गए, तो मंडियों में कोई स्पष्ट संदर्भ मूल्य नहीं था। इसका नतीजा यह हुआ कि मूल्य में भारी उतार-चढ़ाव आया, जिससे किसान और उपभोक्ता दोनों को अधिक कीमतों का सामना करना पड़ा। खासकर, खाद्य तेलों की कीमतों में वृद्धि देखी गई। साथ ही इससे स्थानीय मंडियों में मूल्य निर्धारण की कमी हुई और खुदरा और थोक स्तर पर खाद्य तेलों की कीमतों में बढ़ोतरी हुई। और निलंबन के बाद अंतरराष्ट्रीय बाजारों में इन कृषि उत्पादों के हेजिंग की क्षमता पर असर पड़ा। वहीं, आईआईटी बॉम्बे ने महाराष्ट्र, राजस्थान और मध्यप्रदेश के किसानों और कृषि उत्पादन संगठनों (एफपीओ) के साथ गहन साक्षात्कार करके यह जाना कि भविष्य अनुबंधों के निलंबन ने मूल्य निर्धारण और जोखिम प्रबंधन पर किस तरह से असर डाला है।

आईआईटी बॉम्बे का निष्कर्ष बताता है कि कृषि उत्पादों के भविष्य अनुबंधों और स्पॉट (स्थानीय बाजार) कीमतों के बीच कोई सकारात्मक संबंध नहीं था और न ही इन अनुबंधों के कारण खाद्य कीमतों में वृद्धि होती है। यह भी स्थापित किया गया कि बाजार में मूल्य उतार-चढ़ाव को कम करने में इन अनुबंधों का महत्वपूर्ण योगदान था।

खाद्य सुरक्षा

वैश्विक भूख में 1.52 करोड़ की वृद्धि

संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) द्वारा जारी सांख्यिकीय वार्षिकी के अनुसार खाद्य उत्पादन में वृद्धि के बावजूद वैश्विक भूख लगातार बढ़ती जा रही है। 2019 में महामारी से पहले की तुलना में 2023 में 1.52 करोड़ अधिक लोग भूख का सामना कर रहे हैं।

जुलाई 2024 में जारी एफएओ की स्टेट ऑफ फूड सिक्योरिटी और न्यूट्रिशियन इन द वर्ल्ड रिपोर्ट ने इसी चुनौती को रेखांकित किया था, जिसमें पाया गया था कि 2023 में 71.3 से 75.7 करोड़ लोगों को भूख का सामना करना पड़ सकता है। रिपोर्ट में कहा गया है कि 2023 में भूख ने दुनिया की 9.1 प्रतिशत आबादी को प्रभावित किया। यह 2019 की अनुमानित 7.5 प्रतिशत से कहीं अधिक है। कुपोषण की व्यापकता का वैश्विक स्तर जो 2020 में तेजी से बढ़ा था और 2021 में और भी बढ़ा। अफ्रीका में कुपोषण सबसे अधिक था, उसके बाद एशिया का नंबर आता है। भले ही 2022 और 2023 के बीच एशिया में भूख से जूझ रहे लोगों की संख्या में 20 लाख की कमी आई हो, लेकिन फिर भी 2019 और 2023 के बीच यह 7.9 करोड़ से बढ़कर 38.5 करोड़ हो गई। एशिया में दुनिया के 52 प्रतिशत कुपोषित लोग रहते हैं।



अंतरिक्ष

इसरो और नासा करेंगे कई खोजें

अमेरिकन स्पेस एंड एरोनॉटिक्स एजेंसी (नासा) और भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के सहयोग से भेजे जाने वाले उपग्रह के माध्यम से पृथ्वी का अवलोकन करना और धरती पर आने वाली आपदा की तैयारी में मदद मिलेगी। एनआईएसएआर (नासा-इसरो सिंथेटिक एपर्चर रडार) उपग्रह न केवल पृथ्वी की सतह पर बल्कि बर्फ से ढकी मोटी चादरों, ग्लेशियरों, समुद्री बर्फ और वनस्पतियों में भी होने वाले तमाम परिवर्तनों को ट्रैक करेगा। यह उपग्रह भूकंप, बर्फ की चादर के नीचे होने वाली हलचल, भूस्खलन और ज्वालामुखी से होने वाली गतिविधियों का भी निरीक्षण करेगा। यह उपग्रह 2025 की शुरुआत में भारत के आंध्र प्रदेश में सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र से लॉन्च किया जाएगा। उपग्रह जमीन की हलचल को मापने के लिए घनी वनस्पति के बीच भी देख सकता है, जो विशेष रूप से ज्वालामुखियों या वनस्पति द्वारा छिपी हुई फॉल्ट लाइनों के आसपास के क्षेत्रों की निगरानी करने में सहायक होगा। उपग्रह भूकंप की भविष्यवाणी नहीं करेगा, लेकिन भूकंपीय गतिविधि के लिए सबसे अधिक संवेदनशील क्षेत्रों की पहचान करने में अवश्य मदद करेगा। शोधकर्ताओं को यह देखने में मदद करेगा कि फॉल्ट लाइन के कौन से हिस्से भूकंप पैदा किए बिना धीरे-धीरे आगे बढ़ रहे हैं और कौन से क्षेत्र अटक हुए हैं और अचानक बदल सकते हैं। दुनिया के कम निगरानी वाले हिस्सों में यह नए भूकंप-क्षेत्रों की जानकारी दे सकता है। जब भूकंप आता है तो वैज्ञानिकों को यह समझने में मदद करेगा कि भूकंप कैसे आगे बढ़ रहा है।



INTEGRATED ONLINE AND ONSITE TRAINING ON ENVIRONMENTAL IMPACT ASSESSMENT

CSE is conducting an integrated online and onsite training programme on EIA. The training programme will comprise of two parts: Basic learning (online platform) and Advanced learning (at our residential campus). The course is designed to provide an overall understanding of the EIA process which includes theoretical knowledge via lectures from experts and firsthand experience through group exercises, discussions and case studies.

PROGRAM DESIGN

PART A

BASIC LEARNING (ONLINE)

- Includes sessions on methodology for preparing an EIA, approach for baseline data collection, identification and assessment of impacts along with the Environmental Clearance process.
- Conducted on Moodle Platform where participants will be provided with pre-recorded reading / audio-visual training material which they are expected to self-study as per their convenience. The course material will be for the duration of 2 hours/day

PART B

ADVANCED LEARNING (ONSITE)

- Includes practical experience on assessing impacts for different sector projects.
- Developing Environmental monitoring & management plans;
- Reviewing of EIA reports;
- Understanding the intricacies of the EIA system;
- Working on case studies through group exercises and role play;
- Discussion and knowledge sharing with experts;
- Conducted at CSE's residential campus, Anil Agarwal Environment Training Institute (AAETI) in Tijara, Alwar, Rajasthan.



COURSE FEES

PART A

INR 3000 (Indian participants)
USD 100 (Non-Indian participants)

PART B*

INR 25,600/- (double occupancy)
INR 28,000/- (single occupancy)

* Fees includes accommodation, food, training material and travel from Delhi to the training center and back.



COURSE DATES

ONLINE PART

January 14-23, 2025

ONSITE PART

February 18-21, 2025

WHO CAN APPLY

Industry professionals; environment consultants; environment engineers; researchers; academicians, civil society and students aspiring to work in the field of environment.

SPECIAL DISCOUNT

Full waiver on online fees for participants applying for onsite programme.

CERTIFICATE OF COMPLETION WILL BE AWARDED FOR BOTH PROGRAMMES

FOR ANY QUERY, KINDLY CONTACT

ISHITA GARG

Email: ishita.garg@cseindia.org

Mob: +91-9899676011



सतत विकास के लक्ष्यों को हासिल करने में आंगनवाड़ी केंद्र अहम भूमिका निभा सकते हैं। कुपोषण और भुखमरी से जुड़े लक्ष्य इन केंद्रों से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हैं

ग्राम पंचायत के कंधे पर बंदूक

केंद्र सरकार ने पंचायतों से कहा है कि वे संकल्प लें कि साल 2030 तक कम से कम एक लक्ष्य हासिल करेंगे, लेकिन सरकार की यह कोशिश कहीं पंचायतों के कंधों पर बंदूक रखने जैसी तो नहीं है? **राजू सजवान** की रिपोर्ट

महाराष्ट्र के सांगली जिले के ब्लॉक पालुस की ग्राम पंचायत खानदोबाची वाडी को साल 2023 में एक करोड़ रुपए का इनाम मिला है। इस पंचायत को राष्ट्रीय पंचायत पुरस्कार 2023 की गरीबी मुक्त एवं आजीविका संवर्धन पंचायत थीम का पहला पुरस्कार मिला। हालांकि राष्ट्रीय पंचायत पुरस्कार की शुरुआत साल 2011 से हो गई थी, लेकिन 2023 में पहली बार थीम पर आधारित पुरस्कार दिया गया। गांव के सरपंच विनायक गायकवाड़े ने डाउन टू अर्थ से कहा, “अप्रैल 2022 में हमने संकल्प लिया था कि हम साल 2030 तक गांव में गरीबी दूर करने और ग्रामीणों की आजीविका का इंतजाम करेंगे। इस दिशा में हमारे कोशिशों को देखते हुए हमारी पंचायत को राष्ट्रीय पंचायत पुरस्कार का पहला इनाम मिला है। हमारी कोशिशों के चलते गांव की ज्यादातर महिलाएं स्वयं सहायता समूहों से जुड़कर आजीविका कमा रही हैं। पुरुषों को भी अलग-अलग योजनाओं से जोड़कर रोजगार व स्वरोजगार से जोड़ा है। इस ग्राम पंचायत का चयन नेशनल पंचायत परफॉर्मेंस असेसमेंट कमेटी ने किया। इस थीम पर तीन ग्राम पंचायतों को पुरस्कार दिया गया, जबकि इस तरह की कुल 9 थीम पर 27 ग्राम पंचायतों को पुरस्कार दिए गए। यूं तो देखने

में यह एक सालाना सरकारी प्रोत्साहन योजना जैसा लग रहा है, लेकिन यह पुरस्कार आम सरकारी योजनाओं से हटकर इसलिए है, क्योंकि इसे सतत विकास लक्ष्यों (एसडीजी) की ओर बढ़ते भारत का असल व जमीनी प्रयास माना जा रहा है।

उल्लेखनीय है कि दुनिया की तरह भारत को भी सतत विकास लक्ष्यों को साल 2030 तक हासिल करना है। जनवरी 2016 से भारत ने इन लक्ष्यों को हासिल करने के लिए अपना काम शुरू किया और साल 2018 के अंत में नीति आयोग ने पहली एसडीजी इंडिया इंडेक्स रिपोर्ट जारी की। इसके बाद हर साल यह इंडेक्स जारी किया जाता है। इसके माध्यम से राज्यों में एसडीजी लक्ष्यों को हासिल करने की कवायद को मापा जाता था, लेकिन 68 फीसदी से अधिक आबादी वाले ग्रामीण भारत में सतत विकास लक्ष्यों को हासिल किया जा रहा है या नहीं, यह पता करने के लिए साल 2019 में सतत विकास लक्ष्यों का स्थानीयकरण (एलएसडीजी) का विचार नीति आयोग ने सरकार को दिया। इसकी जिम्मेवारी केंद्रीय पंचायती राज मंत्रालय को सौंपी गई और मई 2021 में एलएसडीजी में पंचायती राज संस्थाओं की भूमिका पर मंत्रालय को सलाह देने के लिए एक

आधार पर तैयार करने को कहा। इन नौ थीमों में पहली, गरीबी मुक्त और उन्नत आजीविका वाला गांव, दूसरी स्वस्थ गांव, तीसरी, बच्चों के अनुकूल गांव, चौथी, पर्याप्त जल वाला गांव है। पांचवी थीम, स्वच्छ और हरा-भरा गांव, छठी आत्मनिर्भर बुनियादी ढांचे वाला गांव, सातवीं सामाजिक रूप से न्यायसंगत और सामाजिक रूप से सुरक्षित गांव, आठवीं, सुशासन वाला गांव और आखिरी यानी नौवीं थीम महिला अनुकूल गांव है।

अप्रैल 2022 में यह कवायद कागजों से निकल कर जमीन पर आई और 24 अप्रैल 2022 को राष्ट्रीय पंचायती राज दिवस के मौके पर सभी ग्राम पंचायतों ने स्थानीय सतत विकास लक्ष्यों के अलग अलग विषयों को अपने गांवों में फलीभूत करने का संकल्प लिया। और इन संकल्पों को पूरा करने की दिशा में काम करने वाली पंचायतों को साल 2023 से राष्ट्रीय पंचायत पुरस्कार देने की शुरुआत की गई। यही पुरस्कार विनायक गायकवाड़ की पंचायत को मिला है। इसी तरह सांगली जिले के पालुस ब्लॉक के ही कुडल पंचायत को “स्वच्छ एवं हरित पंचायत” थीम का पहला पुरस्कार मिला है। भारत सरकार के पंचायती राज मंत्रालय के अतिरिक्त

2024 तक जारी नहीं किया जा सका है।

पंचायतों के माध्यम से सतत विकास लक्ष्यों को हासिल करने का जो बीड़ा सरकार ने उठाया है, उसे एक बेहद महत्वपूर्ण कदम माना जा रहा है। विशेषज्ञों का कहना है कि यह बहुत महत्वपूर्ण पहल है। ग्रामीण विकास पर काम कर रही संस्था प्रदान (प्रोफेशनल असिस्टेंस फॉर डेवलपमेंट एक्शन) के कार्यकारी निदेशक सरोज महापात्रा ने डाउन टू अर्थ से कहा, “पंचायतों के पास सतत विकास लक्ष्यों, विशेष रूप से गरीबी उन्मूलन, स्वच्छ जल, स्वच्छता और शिक्षा से जुड़े ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण योगदान देने की क्षमता है। पंचायतें जमीनी स्तर की चुनौतियों का समाधान करने के लिए अच्छी स्थिति में हैं और सामुदायिक संस्थाओं (सीबीओ) के साथ मिलकर वे इसे आसानी से हासिल कर सकती हैं।”

पंचायतें यह जमीनी काम पहले से कर रही हैं, बस उन्हें सतत विकास लक्ष्यों से जोड़कर की गई यह अभिनव कल्पना क्या हकीकत बन पाएगी, इसके लिए जमीनी हकीकत जानना जरूरी है।

क्या है जमीनी हकीकत

हालात वैसे नहीं हैं, जैसे दिखाए जा रहे हैं। भारत को यदि सतत विकास लक्ष्यों को हासिल करना है तो उसके बड़े राज्यों को इस दिशा में तेजी से काम करना होगा। इनमें से एक है, उत्तर प्रदेश। आबादी की दृष्टि से अव्वल और बहुआयामी गरीबी सूचकांक में तीसरे नंबर पर रहे उत्तर प्रदेश में कुल ग्राम पंचायतों की संख्या 58,187 है। जबकि पूरे देश में ग्राम पंचायतों की संख्या 2.63 लाख है। यानी पूरे देश के मुकाबले लगभग 23 फीसदी पंचायतें अकेले उत्तर प्रदेश में हैं। उत्तर प्रदेश में पंचायतों के माध्यम से सतत विकास लक्ष्यों को हासिल करने की दिशा में क्या काम हो रहा है, यह जानने के लिए डाउन टू अर्थ राजधानी दिल्ली से सटे जिला गाजियाबाद के लोनी ब्लॉक में पहुंचा। शनिवार 28 सितंबर 2024 को लोनी खंड विकास कार्यालय (बीडीओ) में मौजूद सहायक खंड विकास अधिकारी (एडीओ) विपिन कुमार ने बताया कि उनके ब्लॉक की सभी 22 पंचायतों में सतत विकास लक्ष्यों की थीमों पर काम चल रहा है। हर साल 2 अक्टूबर को जीपीडीपी की तैयारी के लिए पंचायत की बैठक होती है। बैठक में ग्रामीणों से प्रस्ताव मांगे जाते हैं, उन्हें एलएसडीजी की थीम के आधार पर वर्गीकरण किया जाता है और उस पर विचार विमर्श के बाद अगले साल 31 जनवरी तक जीपीडीपी को अंतिम रूप दे दिया जाता है। जीपीडीपी को राज्य सरकार के पास भेजा जाता है, जिसे मंजूरी मिलने के बाद अगले वित्त वर्ष में जीपीडीपी के आधार पर काम शुरू कर दिया जाता

पंचायतों के पास एसडीजी, विशेष रूप से गरीबी उन्मूलन, स्वच्छ जल, स्वच्छता और शिक्षा से जुड़े ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण योगदान देने की क्षमता है। पंचायतें जमीनी स्तर की चुनौतियों के समाधान के लिए अच्छी स्थिति में हैं

विशेषज्ञ समूह का गठन किया गया। विशेषज्ञ समूह ने 27 अक्टूबर 2021 को रिपोर्ट प्रस्तुत की।

इस रिपोर्ट के आधार पर पंचायत मंत्रालय ने 17 सतत विकास लक्ष्यों को 9 व्यापक विषयों (थीम) में बांट दिया, ताकि पंचायतों के माध्यम से जमीनी स्तर पर सतत विकास लक्ष्यों को हासिल किया जा सके। इसके लिए “संपूर्ण सरकार और संपूर्ण समाज दृष्टिकोण” अपनाया गया। इन नौ थीमों में न केवल 17 लक्ष्यों को समाहित किया गया, बल्कि 73वें संविधान संशोधन अधिनियम 1992 में भारतीय संविधान की 11वीं अनुसूची में शामिल 29 विषय भी इन नौ थीमों में समाहित हैं (देखें; लक्ष्यों का एकीकरण, पेज 16)।

स्थानीय सतत विकास लक्ष्यों को हासिल करने के लिए पंचायत मंत्रालय ने हर पंचायत में बनने वाली ग्राम विकास पंचायत योजना को थीम के

सचिव चंद्र शेखर कुमार बताते हैं कि एलएसडीजी के लक्ष्य हासिल करने के लिए पंचायतों को कोई अतिरिक्त इंसेटिव नहीं दिया जा रहा है, लेकिन पुरस्कार देकर उन्हें लक्ष्य हासिल करने के लिए प्रेरित किया जा रहा है। कुमार के मुताबिक, एलएसडीजी की खास बात यही है कि सरकार इसके लिए अतिरिक्त से कोई राशि खर्च नहीं कर रही है, बल्कि इसे इस तरह डिजाइन किया गया है कि पंचायतों को पहले से अलग-अलग कार्यों के लिए जो राशि मिल रही है, उन्हीं कार्यों को थीम में परिवर्तित कर दिया गया है। कुमार ने डाउन टू अर्थ को बताया कि पंचायतें इन थीम को हासिल करने के लिए कितना काम कर रही हैं, इसका सालाना आकलन करने के लिए हर साल पंचायत डेवलपमेंट इंडेक्स भी जारी किया जाएगा। हालांकि, यह साल 2023 में जारी किया जाना था, लेकिन नवंबर

लक्ष्यों का एकीकरण

सरकार ने सभी ग्राम पंचायतों से आग्रह किया है कि वे संयुक्त राष्ट्र के 17 सतत विकास लक्ष्यों को स्थानीय स्तर (एलएसडीजी*) पर लागू करने के लिए 9 थीमों पर ध्यान केंद्रित करें

- गरीबी मुक्त
- भूखमुक्त संसार
- अच्छ स्वास्थ्य और कल्याण
- गुणवत्तापूर्ण शिक्षा
- लैंगिक समानता
- साफ पानी और स्वच्छता
- सस्ता और स्वच्छ ऊर्जा स्रोत
- समानजनक काम और आर्थिक विकास
- उद्योग, नवाचार और बुनियादी ढांचा
- असमानताओं में कमी
- सतत शहर और समुदाय
- जिम्मेदारपूर्ण खपत और उत्पादन
- जलवायु कार्रवाई
- जल संरक्षण एवं सतत उपयोग
- भूमि का संरक्षण एवं सतत उपयोग
- शांति, न्याय और सशक्त संस्थान
- लक्ष्यों के लिए साझेदारी

पंचायत अधिकार क्षेत्र के तहत 29 विषय*	एसडीजी	एलएसडीजी थीम
1. गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम 2. कृषि, जिसमें कृषि विस्तार भी शामिल है 3. पशुपालन, डेयरी और मुर्गी पालन 4. मत्स्य पालन 5. सार्वजनिक वितरण प्रणाली 6. तकनीकी प्रशिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा 7. बाजार और मेले 8. खादी, ग्रामीण और कुटीर उद्योग 9. लघु वन उत्पाद 10. लघु उद्योग, जिसमें खाद्य प्रसंस्करण उद्योग शामिल हैं 11. ग्रामीण आवास		गरीबी मुक्त और आजीविका में सुधार वाले गांव : 82,940[#] 14.82%
12. स्वास्थ्य और स्वच्छता, जिसमें अस्पताल, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र और डिस्पेंसरी शामिल हैं 13. परिवार कल्याण 14. वयस्क और अनौपचारिक शिक्षा		स्वस्थ गांव : 1,00,506 17.97%
15. शिक्षा, जिसमें प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय शामिल हैं 16. महिला और बाल विकास		बाल-हितैषी गांव : 66,973 11.97%
17. लघु सिंचाई, जल प्रबंधन और वाटरशेड विकास 18. पेयजल		पानी की पर्याप्तता वाले गांव : 116,128 20.76%
19. गैर-पारंपरिक ऊर्जा स्रोत 20. ईंधन और चारा 21. सामाजिक वानिकी और कृषि वानिकी 22. भूमि सुधार, भूमि की चकबंदी और मृदा सुधार		स्वच्छ और हरित गांव : 122,371 21.87%
23. सड़कों, पुलों, जलमार्गों और संचार के अन्य साधनों का निर्माण 24. ग्रामीण विद्युतीकरण, जिसमें बिजली का वितरण शामिल है 25. सामुदायिक संपत्तियों का रखरखाव 26. पुस्तकालय		आत्म-निर्भर बुनियादी ढांचे वाले गांव : 33,560 6.0%
27. सामाजिक कल्याण, जिसमें विकलांग और मानसिक रूप से विकलांग व्यक्तियों का कल्याण शामिल है 28. कमजोर वर्गों का कल्याण, विशेषकर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का कल्याण		सामाजिक रूप से न्यायपूर्ण और सुरक्षित गांव : 12,237 2.18%
29. सांस्कृतिक गतिविधियां		सुशासन वाले गांव : 20,096 3.59%
30. महिला एवं बाल विकास ^		महिला-हितैषी गांव : 4,481 0.80%

*एलएसडीजी, संयुक्त राष्ट्र के 17 सतत विकास लक्ष्यों (एसडीजी) और संविधान की 11वीं अनुसूची में सूचीबद्ध पंचायतों के 29 विषयों पर आधारित हैं। #ऐसे गांवों की संख्या जिन्होंने एलएसडीजी पर ध्यान केंद्रित करने का संकल्प लिया है। ^यह बिंदु एलएसडीजी के दो विषयों में दोहराया गया है। स्रोत: पंचायत विकास सूचकांक रिपोर्ट-2023

है। जब डाउन टू अर्थ ने कुमार से पूछा कि किस पंचायत ने किस थीम पर फोकस करने का संकल्प लिया है तो उन्होंने बताया, “यह सब जानकारी कंप्यूटर में दर्ज है, जबकि ऑपरेटर एक माह पहले इस्तीफा देकर चला गया, अब जब तक नया ऑपरेटर नहीं आएगा, तब तक डाटा फीडिंग का सारा काम रुका रहेगा।” डाउन टू अर्थ ने पूछा कि क्या वह किसी एक ऐसे गांव का दौरा करा सकते हैं, जहां संकल्प के आधार पर एलसीडीजी को हासिल करने की दिशा में काम हो रहा हो तो एडीओ ने कंप्यूटर ऑपरेटर न होने की स्थिति में इसमें भी असमर्थता जताई। खास बात यह है कि पंचायतों के डिजिटलीकरण के दावे केंद्र सरकार लगातार कर रही है और लगभग सभी काम मोबाइल ऐप व अलग अलग साफ्टवेयर के जरिए किए जा रहे हैं, लेकिन राजधानी दिल्ली से सटे लोनी ब्लॉक में एक माह से कंप्यूटर ऑपरेटर न होने के कारण काम पूरी तरह ठप से पड़ा है।

एडीओ के मना करने के बाद डाउन टू अर्थ ने खंड विकास कार्यालय आए सुरेश बैसला से बात की तो पता चला कि उनकी पत्नी निकटवर्ती गांव मेवला भट्टी की प्रधान हैं और उनके गांव में सतत विकास लक्ष्य हासिल करने के कारण उनकी पंचायत को पुरस्कार भी मिल चुका है। संवाददाता जब उनके साथ उनके गांव पहुंचा तो गांव काफी खुशहाल नजर आया। गांव में लगभग हर तरह की सुविधा उपलब्ध है। प्रधान कुसुम बैसला ने बताया कि उनके गांव के सभी बच्चे नियमित स्कूल जाते हैं, जबकि लगभग 40 बच्चे आंगनबाड़ी में इनरोल हैं। उनकी नियमित स्वास्थ्य जांच होती है। इसलिए उन्हें बाल हितैषी पुरस्कार मिला हुआ है। इसी तरह गांव में दो तालाबों के सौंदर्यीकरण व हैंडपंपों के पास व्यर्थ पानी को जमीन के भीतर पहुंचाने के लिए सोखे बनाए गए हैं। इस वजह से उनके गांव को जल पर्याप्त गांव का पुरस्कार मिला है। गांव में सुरक्षा की दृष्टि से सीसीटीवी कैमरे लगाए गए हैं। हालांकि गांव में पीने के पानी के लिए लगभग सब घरों में समर्सिबल पंप लगाए गए हैं, लेकिन अब वहां जल जीवन मिशन के लिए पानी की टंकी लगाई जा रही है।

दरअसल उन्हें उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा जिला स्तर व ब्लॉक स्तर के अलग-अलग थीम पर साल 2021-22 के पुरस्कार मिले हैं। लेकिन उन्हें इस बात का नहीं पता कि उन्होंने किस-किस थीम का संकल्प लिया है। बैसला बताती हैं कि इसकी जानकारी पंचायत सचिव ही दे सकते हैं। जबकि पंचायत सचिव उस समय गांव में नहीं थे। यह बात दीगर है कि राष्ट्रीय स्तर पर उत्तर प्रदेश का प्रदर्शन उत्साहजनक नहीं दिखता। साल 2023 में घोषित राष्ट्रीय पंचायत पुरस्कार के नौ थीम के पहले तीन

स्थानों में प्रदेश की केवल एक पंचायत को बाल हितैषी गांव थीम का तीसरा पुरस्कार मिला।

चुनौतियों से भरा काम

बेशक भारत सरकार ने ढाई लाख से अधिक पंचायतों के माध्यम से सतत विकास लक्ष्यों को हासिल करने का जो बीड़ा उठाया है, वो बेहद जरूरी और महत्वपूर्ण है, लेकिन इस तरह लक्ष्यों को हासिल करने की चुनौतियां तो हैं ही, इसमें गड़बड़ियों की आशंका भी खड़ी हो गई है। एलएसडीजी को हासिल करने के लिए सबसे बड़ी चुनौती पंचायतों की योजनाओं को मिला कर एक (कंवर्जनस) करना है। एक गांव में 36 विभाग अलग-अलग काम करते हैं, लेकिन इनके बीच कोई समन्वय नहीं होता और ना ही वे स्थापित करना चाहते हैं। बहुत से विभाग काम करने के लिए सरपंच तक से बात नहीं करते।

केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्रालय के अंतर्गत काम कर रहे राष्ट्रीय पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास संस्थान के पंचायती राज केंद्र के मुखिया एवं

कहीं कोई खेल तो नहीं

साल 2030 तक पूरी दुनिया को सतत विकास लक्ष्य हासिल करने हैं। मात्र छह साल रह गए हैं। ऐसे समय में पंचायतों को भी इस दौड़ में शामिल कर लिया गया है। कहीं, यह पंचायतों की पीठ पर बंदूक रखने जैसा तो नहीं है। हाल ही में जब देश को खुले में शौच मुक्त (ओडीएफ) घोषित करने के बाद सरकार से जवाब तलबी हुई तो केंद्र ने अपना बचाव करते हुए कहा कि सभी गांवों ने खुद को ओडीएफ घोषित किया है। कहीं, ऐसा ही कुछ तो सतत विकास लक्ष्यों को हासिल करने के लिए नहीं किया जा रहा। इसके जवाब में महापात्रा कहते हैं कि यह एक जायज चिंता है। सरकार ने जिस तरह समय से पहले पूरे देश को खुले में शौच मुक्त घोषित किया था, सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में प्रगति समय से पहले घोषित की जा सकती है। इसलिए उनका मानना है कि एक मजबूत और रियल टाइम निगरानी, मूल्यांकन, प्रशिक्षण की प्रणाली होनी चाहिए, ताकि ग्रामीण

एक जायज चिंता यह है कि जहां सरकार ने पूरे देश को समय से पहले खुले में शौच मुक्त घोषित किया था, सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में प्रगति समय से पहले घोषित की जा सकती है

असोसिएट प्रोफेसर अंजन कुमार भांजा कहते हैं, “इन लाइन विभागों के बीच समन्वय नहीं होना, सबसे बड़ी चुनौती है। यदि ये विभाग एक साथ मिलकर एलएसडीजी के थीम पर फोकस करके काम करें तो हर पंचायत तय समय पर सभी लक्ष्यों को हासिल कर लेंगी।”

पंचायतों में अक्सर विकास परियोजनाओं को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए प्रशासनिक, वित्तीय और तकनीकी क्षमता का अभाव होता है, जैसा कि डाउन टू अर्थ ने लोनी में देखा। पंचायत को प्रशिक्षण व सशक्तिकरण की सख्त जरूरत है। सरोज महापात्रा कहते हैं कि जीपीडीपी हर साल बनाने की बजाय तीन या पांच साल के लिए बनने चाहिए। वित्तीय संसाधन की कमी पंचायतों के लिए एक बड़ी चुनौती बनी हुई है। पंचायतों को अक्सर कम धन मिलता है और एसडीजी से संबंधित कार्यक्रमों को निष्पादित करने के लिए संसाधनों तक उनकी सीमित पहुंच होती है। राज्य और केंद्र सरकार के वित्तपोषण पर निर्भरता उनकी स्वायत्तता को सीमित करती है।

सही जरूरत के आधार पर योजना बना सकें। साथ ही, सरकार को एक नियमित समीक्षा करनी होगी। एसडीजी की वैश्विक रिपोर्टिंग के लिए बॉक्स पर टिक करने के बजाय, सार्थक व दीर्घकालिक परिवर्तन पर जोर दिया जाना चाहिए, जो वास्तव में लोगों के जीवन को प्रभावित करता है। वह एलएसडीजी हासिल करने के लिए पंचायतों को आर्थिक सहयोग देने की भी वकालत करते हैं।

सरपंचों से संकल्प को पूरा कराने की ठोस व्यवस्था न होने पर मामला बिगड़ सकता है। छत्तीसगढ़ के सरगुजा जिले के आदिवासी कार्यकर्ता गंगा राम पेकरा ने डाउन टू अर्थ को बताया कि आदिवासी इलाकों के पंच-सरपंचों को न तो ऑनलाइन फॉर्म भरना आता है और न ही साइन करना। वे पूरी तरह से सचिव व पंचायत अधिकारियों पर निर्भर होते हैं। उनसे संकल्प भरवाया गया या नहीं, उन्हें नहीं पता है। इसलिए आशंका है कि सरकार के अन्य लक्ष्यों की तरह एसडीजी भी अधिकारी कागज में ही पूरा कर लेंगे।

भूले नहीं भूलता भोपाल

2-3 दिसंबर, 1984

करीब 144 करोड़ की आबादी वाले भारत की लगभग 65 प्रतिशत आबादी उस वक्त पैदा भी नहीं हुई थी जब 1984 में दुनिया की सबसे मारक औद्योगिक त्रासदी यानी भोपाल गैस कांड हुआ। यह त्रासदी जापान के हिरोशिमा और नागासाकी पर परमाणु बम गिराए जाने के बाद मृत्यु का तीसरा सबसे वीभत्स व घृणित रूप थी। यूनियन कार्बाइड फैक्ट्री से लीक हुई मिथाइल आइसोसाइनेट यानी एमआईसी ने 5,000 से ज्यादा लोगों की जिंदगी छीन ली। इसका जहर आज तीसरी पीढ़ी भोग रही है और पांच लाख से अधिक लोग इसके दुष्प्रभावों से जूझ रहे हैं। डाउन टू अर्थ के संस्थापक संपादक स्वर्गीय अनिल अग्रवाल इस त्रासदी के तुरंत बाद भोपाल पहुंचे और उन्होंने 15 दिन तक इस दर्दनाक घटना को करीब से देखा। त्रासदी की 40वीं बरसी और ऐसे समय में जब दुनिया रसायन के ढेर पर बैठी है, तब उनकी नजर से एक बार फिर भोपाल को देखना, उसे महसूस करना और उससे सबक लेना जरूरी हो जाता है



फोटो: सुनील सेन/भीष्मसिंह

त्रासदी वाली रात लोग
जोर-जोर से खांसते
हुए उठे और उनकी
आंखें जलने लगीं, जैसे
उनमें मिर्च पाउडर
झोंक दिया गया हो

सुबह 3 बजे

भोपाल के भारत भवन में रहने वाले फिल्म निर्माता आशय चित्रे ने तड़के करीब 3 बजे अपनी खिड़की से शोरगुल सुना। दिसंबर की ठंड में चित्रे के घर की सभी खिड़कियां बंद थीं। जैसे ही चित्रे और उनकी सात माह की गर्भवती पत्नी रोहिणी ने खिड़की खोली, उन्हें गैस की तेज गंध आई। उन्हें तुरंत सांस लेने में तकलीफ महसूस हुई। तभी अचानक उनकी आंखों और नाक से पीला तरल पदार्थ बहने लगा।

खतरे को भांपते हुए दंपति ने एक चादर उठाई और घर से बाहर निकल भागे। उन्हें पता नहीं था कि पड़ोस के सभी बंगले जिनमें टेलीफोन थे, पहले ही खाली हो चुके थे। उनके सबसे करीबी पड़ोसी राज्य के श्रम मंत्री श्यामसुंदर पाटीदार भाग चुके थे। चित्रे से केवल 300 मीटर की दूरी पर रहने वाले मुख्यमंत्री को भी शायद समय रहते सूचित कर दिया गया था।

अपने घर के बाहर चित्रे को अफरा-तफरी का माहौल मिला। हर जगह गैस थी और लोग हर तरफ अपनी जान बचाने के लिए बदहवासी में भाग रहे थे। सुरक्षित रास्ता बताने वाला वहां कोई भी नहीं था। कुछ लोग उल्टी करने लगे और तुरंत मर गए। घबराहट इतनी ज्यादा थी कि लोग अपने बच्चों को पीछे छोड़ गए। लोग रास्तों में पड़े गैस पीड़ितों को उठाने के लिए भी नहीं रुके।

एक जगह दंपति ने देखा कि एक परिवार ने दौड़ना बंद कर दिया है। परिवार को यह कहते सुना, “हम साथ-साथ मरेंगे।” एक अन्य व्यक्ति भागने की हताशा कोशिश में 15 किमी तक भागा। एक गुजरती पुलिस वैन को सुरक्षित दिशा का कोई सुराग नहीं था। शवों को पार करते हुए चित्रे परिवार आधा किलोमीटर दूर स्थानीय पॉलिटेक्निक की ओर भागे। यहां पहुंचकर उन्होंने फैसला किया कि अब आगे नहीं भागेंगे। दो घंटे बाद लगभग 5 बजे एक पुलिस वैन आई और घोषणा की कि घर वापस जाना सुरक्षित है। लेकिन किसी ने पुलिसकर्मियों पर विश्वास नहीं किया। पॉलिटेक्निक से चित्रे ने शहर के दूसरे छोर पर रहने वाले दोस्तों को फोन कर मदद मांगी। तीन दिन बाद वह घर लौट पाए। घर पहुंचकर उन्होंने देखा कि उनका अनार का पेड़ पीला और पीपल का पेड़ काला पड़ चुका था।

उस दुर्भाग्यपूर्ण रात के तीन दिन बाद रोहिणी ने जब व्यायाम शुरू किया तो वह दर्द से कराह उठीं। आशय को अपने पैरों में अकड़न महसूस होने लगी। वे तुरंत बॉम्बे (अब मुंबई) चले गए, ताकि अपने और अपने अजन्मे बच्चे का हाल जानने के लिए एक न्यूरोलॉजिस्ट से मिल सकें।

डर ही डर

उस रात भोपाल में हजारों लोग ऐसे थे, जिनके लिए यह भयावह त्रासदी बहुत पहले शुरू हो चुकी थी लेकिन वे चित्रे परिवार जितने भाग्यशाली नहीं थे। उनमें से ज्यादातर शहर के गरीब लोग थे, जो यूनियन कार्बाइड फैक्टरी के सामने और आसपास की बस्तियों में रहते थे। नगर निगम में ड्राइवर रामनारायण जादव उनमें से एक हैं। वह कहते हैं कि उन्हें रात 11.30 बजे ही गैस का अहसास होने लगा था। लेकिन वह कम से कम 45 मिनट रुके रहे क्योंकि “हर आठवें दिन इतनी गैस लीक होती रहती थी और हमें सीने व आंखों में जलन महसूस होती थी। लेकिन आखिरकार सब कुछ शांत हो जाता था।” अगर कंपनी ने उस समय अपना चेतावनी सायरन बजाया होता, तो भी कई लोग बच सकते थे।

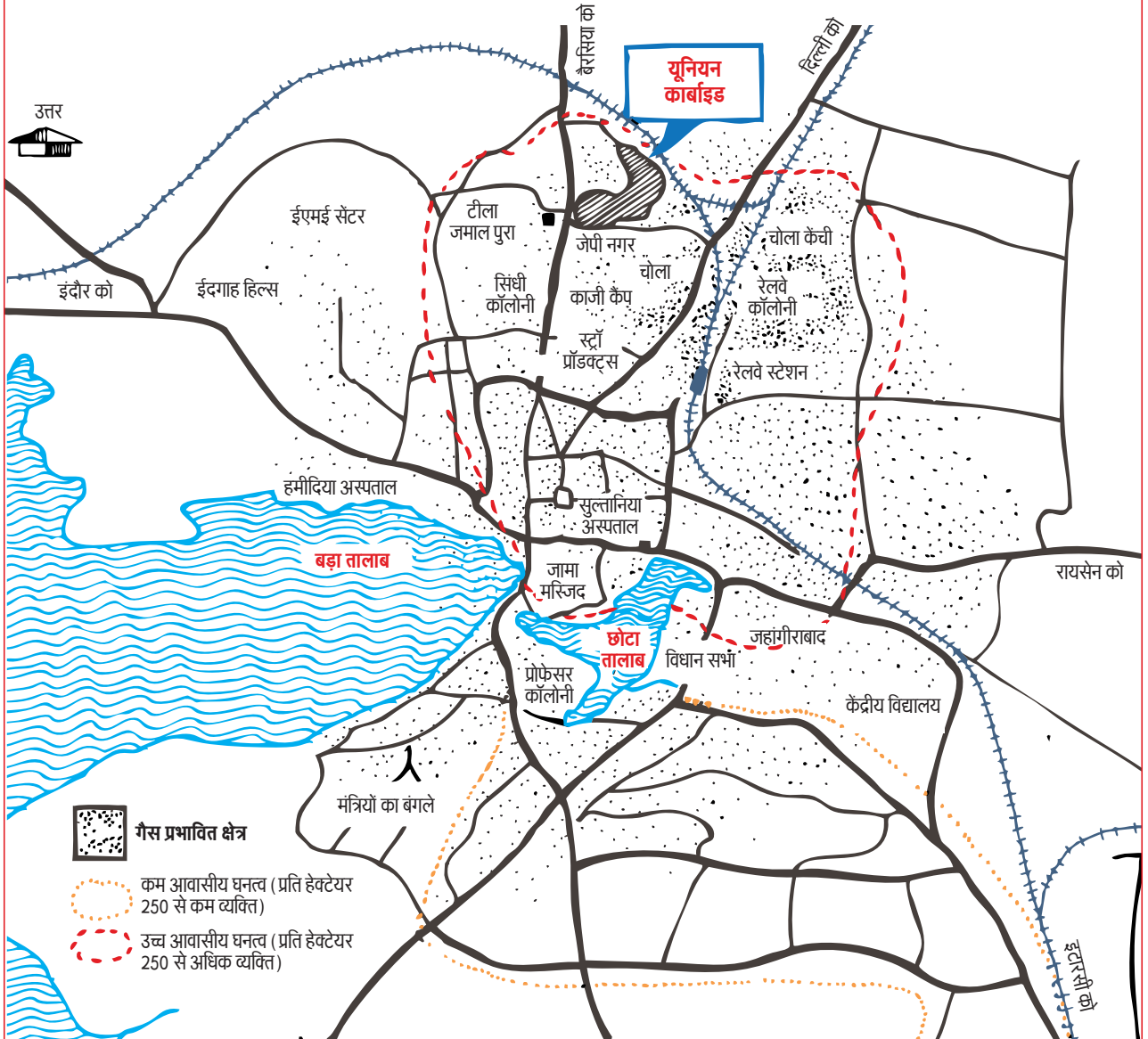
लेकिन कुछ नहीं हुआ और कई हजार लोग रात 12.30 से 1 बजे के बीच ही जागे, तब तक गैस बहुत अधिक मात्रा में फैल चुकी थी। लोग जोर-जोर से खांसते हुए उठे और उनकी आंखें जलने लगीं, जैसे उनमें मिर्च पाउडर झाँक दिया गया हो। जैसे-जैसे जलन बढ़ती गई और सांस लेना असंभव होता गया, वे बेतहाशा भागे। कुछ अपने परिवार के साथ और कई बिना परिवार के। उनके हाथ जो भी लगा वे उस पर सवार हो गए जैसे, साइकिल, बैलगाड़ी, बस, कार, ऑटोरिक्षा, टेम्पो, ट्रक और मोपेड। स्कूटरों पर पूरे परिवार सवार थे। ट्रक भरे हुए थे और लोग उनमें लटके हुए थे। कुछ लोग पहले से ही अंदर मौजूद लोगों के पैर और हाथ पकड़ रहे थे। छोटे बच्चों, बूढ़ों और महिलाओं को ठेले में धकेला जा रहा था या उन्हें उठाकर ले जाया जा रहा था।

सुबह 3 बजे तक मुख्य मार्ग इंसानों की अनियंत्रित और अंतहीन भीड़ से भर चुके थे। सड़कें उल्टी से बदबू मार रही थीं। जो

मुख्य मार्ग इंसानों की अनियंत्रित और अंतहीन भीड़ से भर चुके थे। सड़कें उल्टी से बदबू मार रही थीं। जो गिर गए उन्हें भीड़ ने कुचल दिया। सबसे ज्यादा प्रभावित बच्चे हुए। वे चलने और सांस लेने में असमर्थ थे। उनका दम घुट गया और वे मर गए। हजारों लोग सैकड़ों किलोमीटर दूर सीहोर, विदिशा, होशंगाबाद, रायसेन, ओबैदुल्लागंज, आष्टा, उज्जैन, देवास, इंदौर, रतलाम और नागपुर चले गए

गैस की जद

यूनियन कार्बाइड की फैक्ट्री से निकली गैस करीब 40 वर्ग किलोमीटर में फैल गई और पांच से आठ किलोमीटर दूर तक के लोगों को गंभीर रूप से प्रभावित किया



लोग गिर गए उन्हें भीड़ ने कुचल दिया। सबसे ज्यादा प्रभावित बच्चे हुए। वे चलने और सांस लेने में असमर्थ थे। उनका दम घुट गया और वे मर गए।

हजारों लोग सैकड़ों किलोमीटर दूर सीहोर, विदिशा, होशंगाबाद, रायसेन, ओबैदुल्लागंज, आष्टा, उज्जैन, देवास, इंदौर, रतलाम और यहां तक कि 400 किलोमीटर दूर नागपुर चले गए। 10,000 लोग रायसेन गए। वे इलाज के लिए जिला अस्पतालों में पहुंचे। सैकड़ों लोग जो भागकर उज्जैन और इंदौर पहुंचे, उन्हें तुरंत अस्पताल में भर्ती कराना पड़ा। इस उन्माद के बीच साहस की भी कोई कमी नहीं थी। सैकड़ों टैक्सी, ऑटोरिक्षा, टेम्पो और ट्रक

ऑपरेटरों ने हजारों लोगों को निकालने के लिए अपनी जान जोखिम में डाल दी। बहुराष्ट्रीय कंपनी यूनियन कार्बाइड की अत्याधुनिक फैक्ट्री से निकली गैस करीब 40 वर्ग किलोमीटर में फैल गई और पांच से आठ किलोमीटर दूर तक के लोगों को गंभीर रूप से प्रभावित किया। शहर की एक चौथाई आबादी यानी करीब 2,00,000 लोगों के लिए भोपाल गैस चैंबर बन गया। अगर भोपाल की दो झीलें गैस के रास्ते में आकर उसे बेअसर नहीं करती तो और भी बड़ी त्रासदी हो सकती थी। रेलवे स्टेशन फैक्ट्री के करीब और गैस के गुबार के रास्ते में था। डिप्टी चीफ पावर कंट्रोलर रहमान पटेल ने वहीं रहकर अपनी जान जोखिम में डाल दी। जब उनके

आवरण कथा

मुखिया दहशत भरी कॉल का जवाब देने आए तो उन्होंने पटेल को काम पर पाया, जबकि उनकी पत्नी और 14 वर्षीय बेटे की पड़ोसी रेलवे कॉलोनी में पहले ही मौत हो चुकी थी। कंट्रोल रूम से महत्वपूर्ण ट्रंक मार्ग पर सभी ट्रेनों की आवाजाही पर नजर रखी जाती है। यह कमरा अव्यवस्थित था, चारों ओर उल्टी और मानव मल बिखरा हुआ था, फाइलें और रजिस्टर अव्यवस्थित थे और कुर्सियां गिरी हुई थीं। आधी रात के बाद 116 अप गोरखपुर-बॉम्बे एक्सप्रेस आई, लेकिन इसके यात्री चमत्कारिक रूप से मौत से बच गए। संभवतः इसलिए क्योंकि उन्होंने ठंडी रात के कारण खिड़कियां बंद रखी थीं। एक वजह यह भी थी कि स्टेशन अधीक्षक एचएस भुर्वे ने ट्रेन को सुरक्षित निकालने के लिए अपनी जान जोखिम में डाल दी थी। भुर्वे बाद में मृत पाए गए थे लेकिन इससे पहले आसपास के सभी स्टेशनों को भोपाल में ट्रेनों के आने से रोकने के लिए सतर्क कर दिया। इस कारण करीब सात घंटों तक यह महत्वपूर्ण स्टेशन दुनिया से कटा रहा। अगली सुबह सैकड़ों बीमार और तड़पते हुए लोग प्लेटफॉर्म, सीढ़ियों, दफ्तर के कमरों और यहां तक पटरियों पर मिले। आसपास की सड़कों और फुटपाथों पर गरीब भिखारियों और लावारिश बच्चों की लाशें बिखरी पड़ी थीं।

अस्पताल का हाल

जो लोग भाग नहीं पाए, उन्होंने अस्पताल का रुख किया। भोपाल के 1,200 बिस्तरों वाले हमीदिया अस्पताल में रात 1.15 बजे पहला मरीज आंखों में परेशानी लेकर पहुंचा। पांच मिनट के भीतर करीब एक हजार लोग यहां पहुंच गए और 2.30 बजे इनकी संख्या 4,000 तक पहुंच गई। ये लोग केवल आंखों से ही नहीं बल्कि सांस लेने की कठिनाइयों से भी जूझ रहे थे। अस्पताल कर्मी इतने लोगों को देखकर हतप्रभ थे। उनके हाथ पांव फूल गए और उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि क्या करें। यूनियन कार्बाइड भी उपयोगी सूचनाएं नहीं दे रहा था।

फैक्टरी से तीन किलोमीटर की दूरी पर स्थित हमीदिया अस्पताल के कर्मचारी भी गैस की चपेट में आ गए और बहुत जल्द उनके स्थान पर नई मेडिकल टीम बुलाई गई। रात 2.30 बजे अस्पताल पहुंचे पत्रकारों ने वहां केवल एक डॉक्टर पाया और उसके पास मरीजों का इलाज करने के लिए दवाएं भी नहीं थीं। अल सुबह तक शायद ही कोई डॉक्टर या मेडिकल छात्र नजदीकी हॉस्टल से पहुंच पाया। पीड़ित सेना के ट्रकों में भरकर अस्पताल पहुंचाए जा रहे थे। सैकड़ों मूक, असहाय दर्शकों के सामने लोग खासकर छोटे बच्चे अपनी अंतिम सांसों ले रहे थे। जब इलाज शुरू भी हुआ तो वह केवल फौरी राहत के लिए था, जैसे श्वसननली के सिकुड़ने से होने वाली ऐंठन को कम करने के लिए इंजेक्शन या आंखों पर मरहम लगाना।

सूर्योदय के समय तक सैकड़ों (कुछ लोगों के मुताबिक हजारों) लोगों को मौत हमेशा के लिए सुला चुकी थी। बहुत से लोग सड़कों पर और बहुत से लोग अपने घरों के भीतर फटी हुई रजाइयों के नीचे मरे मिले। बहुत सी पेट से फूली हुई लाशें सड़ने लगी थीं और उनमें कुत्ते और गिद्ध मंडरा रहे थे। अन्य 2,000 लोग अस्पताल और घरों में मर रहे थे। गैस प्रभावित क्षेत्र में सैकड़ों मवेशियों और जानवरों के शव हाथी के आकार में फूल चुके थे। यह दृश्य बड़ा भयावह था।

2-3 दिसंबर,
1984 की
दुर्भाग्यपूर्ण रात
मारे गए लोगों
की कतारें



रात करीब 1 बजे तक हमीदिया अस्पताल में करीब 25,000 लोग टूस दिए गए थे। फर्श खून और उल्टी से सना हुआ था। हमीदिया के एक डॉक्टर ने बताया, “मैं शिशु रोग विभाग में खड़ा था। वहां इतनी भयानक भीड़ थी कि फर्श पर शव रखने की भी जगह नहीं थी। जैसे ही किसी मरीज को मृत घोषित किया जाता, उसके रिश्तेदार शव लेकर गायब हो जाते। मैंने कम से कम 50 शवों को इस तरह ले जाते हुए देखा। मेरा अनुमान है कि 500 से 1,000 शवों को मृत्यु पंजीकरण से पहले ही ले जाया गया होगा।”

जीवित बचे लोगों के लिए अपने मृतकों की पहचान करना मुश्किल था। मेरे और अधमरे में अंतर करना भी मुश्किल था। शवगृह में मौजूद लोग पोस्टमॉर्टम करने में असमर्थ थे। एक पिता रो पड़ा, “वे मेरे बेटे को ले गए हैं। वह केवल तीन साल का था। मेरे पिता, मां और दो बच्चे गंभीर हालत में हैं। अल्लाह उन दरिदों को सजा देगा?”

हिरोशिमा-नागासाकी के बाद मृत्यु का सबसे वीभत्स रूप

ऐसे हालात में जब प्रशासन सो रहा था, सेना ने मोर्चा संभाल लिया। सब-एरिया कमांडर ब्रिगेडियर एनके मैनी को सेवानिवृत्त ब्रिगेडियर एमएल गर्ग ने रात करीब 1.15 बजे बुलाया था। गर्ग स्ट्रॉ प्रोडक्ट्स



फोटो: प्रकाश हथवले

के जनरल मैनेजर थे। यह फैक्ट्री गैस के गुबार के रास्ते में थी। गर्ग को उनकी फैक्ट्री के कर्मचारियों ने बताया था कि उनका दम घुट रहा है, इसलिए उन्हें 176 लोगों को निकालने के लिए मदद की जरूरत थी। उन्होंने तुरंत सेना से संपर्क किया और मदद ली। मदद के लिए कई कारें और ट्रक पहुंचे। स्ट्रॉ प्रोडक्ट्स के कर्मचारियों को सैन्य अस्पतालों में पहुंचाया गया, लेकिन तब तक उनमें से कुछ की मौत हो चुकी थी और अन्य गंभीर रूप से बीमार थे।

2.45 बजे तक सेना ने वाहनों का एक बेड़ा भेज दिया था और घरों में फंसे लोगों की तलाशी शुरू कर दी थी। इलेक्ट्रिकल और मैकेनिकल इंजीनियर्स सेंटर के मेजर जीएस खानूजा ने फैक्ट्री क्षेत्र में बार-बार चक्कर लगाए और पूरी रात मिलिट्री हॉस्पिटल के साथ-साथ हमीदिया हॉस्पिटल में लोगों को निकालने के लिए एक निरंतर चैनल बनाया। खानूजा पीड़ितों की तलाश में घर-घर गए। शहर के पुलिस अधीक्षक स्वराज पुरी (जो बाद में इस खोज में सेना के साथ हो गए) ने एक रिपोर्टर को बताया, “यह भयावह था, किसी भी दरवाजे पर दस्तक दें और आपको केवल शव मिलेंगे।” खानूजा को अंततः अस्पताल में भर्ती कराया गया। टाइम्स ऑफ इंडिया के प्रफुल बिदवाई ने कहा, “अगर हिरोशिमा और नागासाकी के बाद मौत का कोई दयनीय, विकराल और घृणित रूप है तो वह यही है।” हिंदू श्मशान घाट पर सुबह 9 बजे से एक बार में लगभग 15 चिताएं जलाई गईं। श्मशान घाटों में

जल्द ही जलाऊ लकड़ी खत्म हो गई और अधिक लकड़ी लाने के लिए ट्रकों में मार्शल भेजने पड़े। समय, धन, ऊर्जा और मानव शक्ति बचाने के लिए प्रत्येक चिता पर पांच से 10 लोगों का अंतिम संस्कार किया गया। हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार, बच्चों और शिशुओं को कब्र खोदने वालों के एक समूह द्वारा तेजी से दफनाया गया। कब्र के आसपास कुछ ही माता-पिता दिखाई दिए।

मुस्लिम कब्रिस्तान में भी आने वाले शवों को दफनाने के लिए पर्याप्त जगह नहीं थी। बचावकर्मियों ने 11 शवों के लिए कब्र खोदी। जब जगह नहीं बची तो पुरानी कब्रों को खोला गया और 100 साल पुरानी हड्डियों को निकालकर जगह बनाई गई। भोपाल में मुख्य मौलवी को पुरानी कब्रों को खोदने की अनुमति देने के लिए फतवा जारी करना पड़ा। कुत्तों के झुंड इधर-उधर घूम रहे थे और अगर उन्हें कोई कब्र गहरी नहीं मिलती थी तो शवों को नोचकर खाने लगते थे।

मौत का तांडव

भोपाल में मौत का तांडव कई दिनों तक चलता रहा। हजारों लोग शहर के अस्पतालों के चक्कर काटते रहे। यहां मध्य प्रदेश के दूसरे शहरों से 500 डॉक्टर और सहायक कर्मचारी पहुंच गए थे। गैस रिसाव के 30 घंटे बाद शहर में पहुंचे एक विदेशी संवाददाता ने गैस प्रभावित भोपाल की स्थिति का वर्णन इस तरह किया, “कारखानों में

आवरण कथा

लाशें अब भी जमीन पर पड़ी थीं। उन्हें उठाकर एक ट्रक में भरा जा रहा था। जहां भी देखो, लोग उल्टी कर रहे थे और तेज खांसी से परेशान थे। शहर की सभी दुकानें बंद थीं और हर सड़क पर लोग नालियों में मरे पड़े थे। बहुत से लोग जमीन पर पड़े तड़प रहे थे, ठीक वैसे ही जैसे ऊंचाई से शिकार करने के बाद पक्षी तड़पते हैं। मृतकों को गिद्धों ने घेर रखा था। जब गिद्ध झपट्टा मारकर भागते तो कुत्ते हमला कर देते और मांस के टुकड़े नोच लेते। इनसे मृतकों को बचाने के लिए भारतीय सेना के राइफलधारी सैनिक तैनात थे। उनके साथ साथ लंबी-लंबी लाठियां लिए हुए स्वयंसेवक भी निगरानी कर रहे थे।

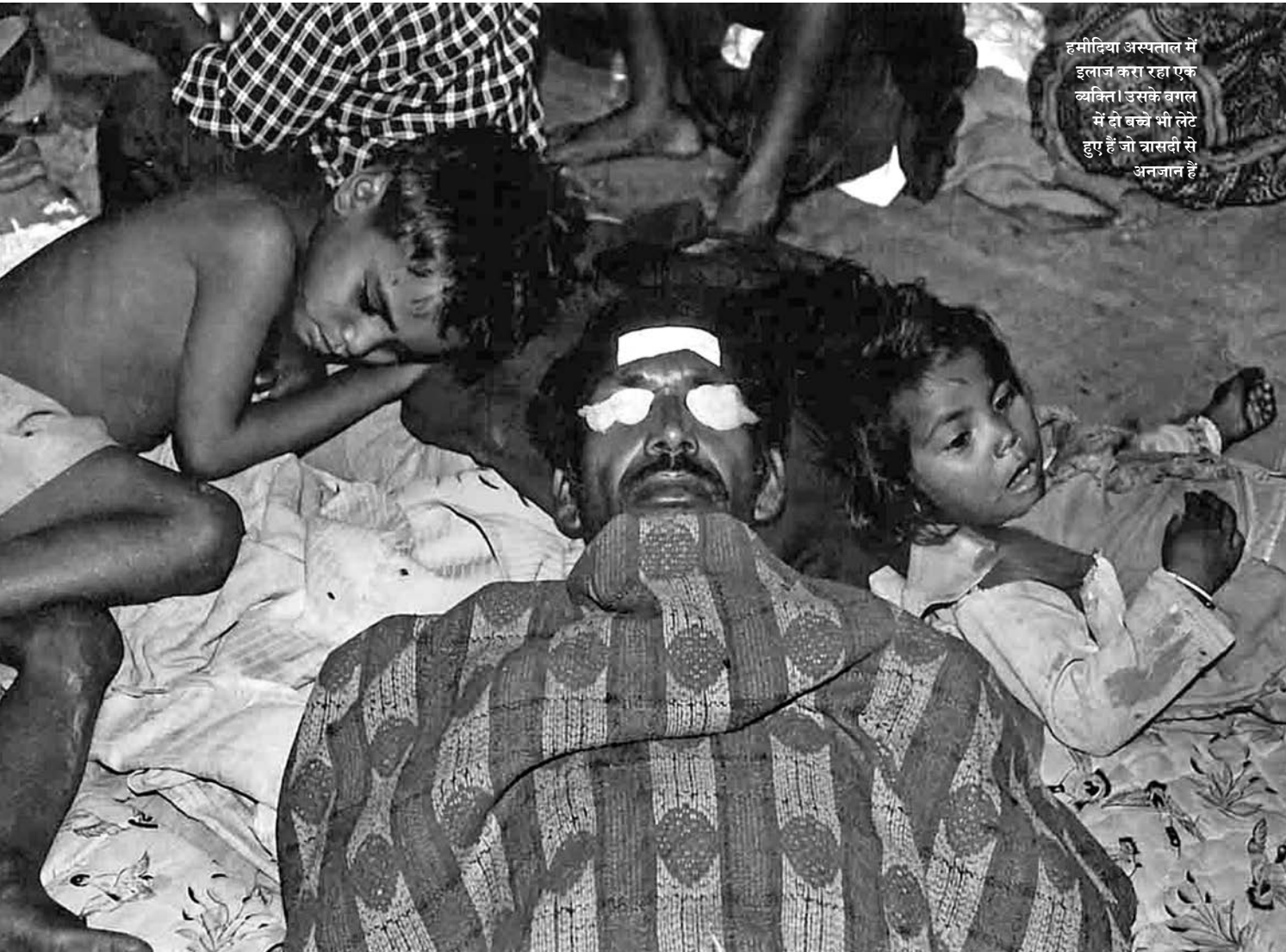
छोटे बच्चों ने बताया कि वे रात भर भागते रहे। उन्हें रुकने की जगह नहीं मिली। उन्होंने सैनिकों से पूछा कि उनके माता-पिता कहां मिलेंगे। सैनिकों ने जवाब दिया, “यहां रुको। एक ट्रक आएगा और तुम्हें अस्पताल ले जाएगा। सभी लोग वहां होंगे।” डरे हुए बच्चे इंतजार करते रहे। जब ट्रक आया, तो उसने बच्चों को हमीदिया अस्पताल पहुंचाया। सेना भी वहां मौजूद थी, जो बिना किसी धक्का-मुक्की के लोगों की आवाजाही को सुचारू बनाए हुए थी। सैनिकों ने 60 टेंट लगाए थे, जो 20-20 लोगों के लिए वार्ड बन गए। कुछ दूरी पर सेना ने एक मुर्दाघर बनाया था, जहां शहर में गश्त करने वाले लोग मृतकों की पहचान करने के लिए

लाते थे। सूबेदार एबी भोसले ने कहा, “मुझे लगा कि मैंने सब कुछ देख लिया है, लेकिन यह युद्ध से भी बदतर है।”

तीसरे दिन शहर के अस्पतालों में 400 और मौतें हुईं। अस्पतालों का कहना था कि अब तक 75,000 लोगों का इलाज किया जा चुका था। अस्पतालों में एमआईसी (मिथाइल आइसोसाइनेट) विषाक्तता के नए मामले सामने आते रहे, जिससे बाद के प्रभावों की आशंका बढ़ गई। कुछ पीड़ितों में लकवा के लक्षण दिखे, 500 को कॉर्नियल अल्सर हो गया और डॉक्टरों ने कहा कि वे अंधे हो सकते हैं। कब्रिस्तान में कब्र खोदने में मदद करने वाले लोग थक चुके थे। उन्होंने कहा, “हम शवों को दफनाने से तंग आ चुके हैं। जगह भी नहीं है।”

छठे दिन फिर से डर का माहौल था। कुछ 51 मरीज जिन्हें पहले आंखों की मामूली बीमारी के इलाज के बाद घर भेज दिया गया था, उन्हें गंभीर हालत में अस्पताल ले जाना पड़ा। डॉक्टरों का मानना था कि ये लोग भोपाल झील से खाई गई मछलियों से प्रभावित हुए होंगे। एहतियात के तौर पर अधिकारियों ने शहर के मुख्य मछली बाजार को तुरंत बंद कर दिया। अगले दिन सरकार ने घोषणा की कि बूचड़खाने बंद किए जा रहे हैं ताकि गैस से प्रभावित जानवरों का मांस न बेचा जा सके, लेकिन मछलियों की बिक्री पर कोई प्रतिबंध नहीं था।

फोटो: प्रकाश हथवलने



हमीदिया अस्पताल में
इलाज करा रहा एक
व्यक्ति। उसके बगल
में दो बच्चे भी लेटे
हुए हैं जो त्रासदी से
अनजान हैं

सातवां दिन

अस्पताल में भर्ती होने वालों और मौतों में लगातार कमी आने लगी थी, लेकिन आपदा के सातवें दिन शहर में दहशत की एक नई वजह सामने आई। कारखाने में अब भी 15 टन घातक गैस बची हुई थी, जिसे भोपाल की सुरक्षा से लिए पहले ही नष्ट करना था।

सरकार ने वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर) के महानिदेशक एस वरदराजन की अध्यक्षता में वरिष्ठ वैज्ञानिकों की एक टीम को निपटान प्रक्रिया का काम सौंपा। वरदराजन ने भोपाल में केंद्र सरकार की क्षेत्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला में अपना कार्यालय स्थापित किया और खुद को पूरी तरह से गोपनीय कर लिया। इससे शहर के लोग परेशान हो गए। पत्रकारों को बताया गया कि गैस के निपटान के चार तरीके हैं- इसे कास्टिक सोडा जैसे रसायन से बेअसर करें (जैसा कि कारखाने के वेंट स्क़्रबर में होने की उम्मीद है), इसे जला दें (जैसा कि कारखाने के फ्लेयर टावर में होने की उम्मीद है), इसे ड्रम में पैक करें और इसे अमेरिका या अन्य जगहों पर मूल यूनियन कार्बाइड को भेज दें या बस कारखाने को चालू करें और अंतिम उत्पाद कार्बोरिल कोटनाशक में बदल दें।

यह स्पष्ट था कि कंपनी अंतिम विकल्प के लिए कड़ी मेहनत कर रही थी। अमेरिका की यूनियन कार्बाइड कॉरपोरेशन (यूसीसी) ने तुरंत दुनियाभर में अपनी इकाइयों को सुझाव दिया कि संयंत्रों को बंद करने से पहले कार्बोरिल का उत्पादन करने के लिए बची हुई एमआईसी का उपयोग करें।

भोपाल में यूनियन कार्बाइड प्रबंधन ने कथित तौर पर शेष गैस के निपटान के लिए त्रासदी के ठीक चार दिन बाद 7 दिसंबर को ही संयंत्र को फिर से खोलने की कोशिश की थी। लेकिन ऐसा करने आए कर्मचारियों को जिला प्रशासन ने लौटा दिया। दरअसल आपदा के चौथे दिन मुख्यमंत्री अर्जुन सिंह ने घोषणा की थी कि प्लांट को फिर कभी नहीं खोलने दिया जाएगा। प्लांट को फिर से शुरू करने का मतलब होता मुख्यमंत्री की घोषणा को झूठा साबित करना। टाइम्स ऑफ इंडिया के मुताबिक, “यह 1,300 से अधिक लोगों की मौत के लिए जिम्मेदार कंपनी के सामने आत्मसमर्पण करने जैसा होगा। यह यूनियन कार्बाइड को सुरक्षा मंजूरी या प्रमाणपत्र देने और इसके प्रबंधन को अपनी मर्जी से प्लांट चलाने की अनुमति देने के बराबर होगा।” 10 दिसंबर को खबर फैली कि फैक्ट्री फिर से शुरू हो गई है। एक जिला अधिकारी ने दावा किया कि घातक गैस को तैयार उत्पादों में परिवर्तित करके “गैस को बेअसर करने” का काम शुरू हो गया है, लेकिन वरदराजन द्वारा एक प्रेस बयान में तुरंत इसका खंडन किया गया। इस बीच शहर ने बेचैनी छाई रही। अगले दिन वरदराजन की टीम द्वारा परीक्षण के लिए प्लांट को फिर से शुरू करने की रिपोर्टों के बीच अर्जुन सिंह ने लोगों से अपील की “घबराने की कोई बात नहीं है और मैं फिर से दोहराता हूँ कि शहर को खाली करने का कोई कारण नहीं है।” जब मुख्यमंत्री यह घोषणा रहे थे, तब वह और उनकी सरकार अलग तरह से काम कर रही थी।

सरकारी गाड़ियां शहर भर में घूम-घूम कर हैरान लोगों को बता रही थी कि अगले दिन से सभी स्कूल और कॉलेज 12 दिनों के लिए तत्काल बंद किए जा रहे हैं। मध्य प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम ने पत्रकारों के सामने स्वीकार किया कि राज्य के अन्य हिस्सों से

जहर का जखीरा

यूनियन कार्बाइड कंपनी द्वारा आसपास बहुत सा हानिकारक रसायन फैका गया

रसायन	मात्रा टन में	प्रयोग का प्रकार	प्रदूषण की प्रकृति
एल्डीकार्ब	2	उत्पाद	वायु, जल और मिट्टी
अल्फा नेपथोल	50	घटक	वायु और मिट्टी
बैजीन हेक्साक्लोराइड	5	घटक	वायु, जल और मिट्टी
कार्बोरिल	50	उत्पाद	वायु, जल और मिट्टी
कार्बन टेट्राक्लोराइड	500	घोल	वायु और जल
केमिकल वेस्ट टार	50	अपशिष्ट	जल और मिट्टी
क्लोरोबेंजोएल क्लोराइड	10	घटक	वायु, जल और मिट्टी
क्लोरोफार्म	300	घोल	वायु और जल
क्लोरीन	20	घटक	वायु
क्लोरोसल्फोनिक एसिड	50	घटक	वायु और मिट्टी
हाइड्रोक्लोरिक एसिड	50	घटक	वायु और मिट्टी
मेथेनोल	50	घोल	वायु और जल
मिथाइलीन क्लोराइड	100	घोल	वायु और जल
मिथाइल आइसोसाइनेट	5	घटक	वायु, जल और मिट्टी
मर्करी	1	सीलेंट पेन फिल्टर	जल और मिट्टी
मोनोक्लोरो टोल्यून	10	घटक	वायु, जल और मिट्टी
मोनोमिथाइल एमीन	25	घटक	वायु
नेपथेलीन	50	घटक	वायु
ऑर्थो डाइक्लोरोबैजीन	500	घटक	वायु
फॉस्जीन	5	घटक	वायु
ट्राइमेथिलैमाइन	50	कैटलिस्ट	वायु
टोल्यून	20	घटक	वायु, जल और मिट्टी

स्रोत : पूर्व यूसीआईएल कर्मचारी की स्वीकारोक्ति, सीएसआईआर और आईआईसीटी के निष्कर्ष जो अमेरिका और भारत के उच्चतम न्यायालय में जमा किए गए

बड़ी संख्या में बसें भोपाल बुलाई गई हैं, लेकिन ऐसा “भोपाल लौटने वाले” लोगों की असाधारण भीड़ को देखते हुए किया गया है।

लोगों ने स्पष्ट रूप से इन हलचलों को आपातकालीन निकासी की सरकारी योजना के रूप में देखा और उन्हें मुख्यमंत्री का आश्वासन झूठा लगा। सरकार ने लोगों को यह भरोसा दिलाने के लिए पुलिस वैन को शहर भर में घुमाया कि कोई खतरा नहीं है। इसी तरह का आश्वासन ऑल इंडिया रेडियो के स्थानीय स्टेशन पर प्रसारित किया गया। लेकिन इस सबका बहुत कम असर हुआ।

शून्य जोखिम

अगले दिन तक असमंजस खत्म हो गया। सरकार ने कंपनी के सामने झुकने का फैसला किया। मुख्यमंत्री ने घोषणा की कि सरकारी टीम इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि गैस के निपटान के लिए

आवरण कथा

सभी विकल्पों में से फैक्ट्री को चालू करना “सबसे व्यावहारिक और सुरक्षित तरीका” है। यह वही “शून्य जोखिम” विधि थी जिसके बारे में उन्होंने पहले बात की थी।

उन्होंने कहा कि फैक्ट्री 16 दिसंबर से चार से पांच दिनों के लिए फिर से शुरू होगी ताकि बची हुई गैस को कार्बोरिल में बदला जा सके लेकिन सभी सुरक्षा उपाय अपनाए जाएंगे और “न्यूट्रलाइजेशन” प्रक्रिया से किसी भी तरह का कोई खतरा नहीं होगा। उन्होंने यह भी घोषणा की कि वे पूरी प्रक्रिया के दौरान व्यक्तिगत रूप से प्लांट में मौजूद रहेंगे। लेकिन पहले से ही दहशत में आए लोगों के लिए यह सब मायने नहीं रखता था। उनकी सबसे बुरी आशंका तब और पुख्ता हो गई जब उन्होंने देखा कि सरकार की दोहरी नीति जारी है। मुख्यमंत्री ने उसी समय घोषणा की कि अगर लोग जाना चाहें तो उनकी सरकार 13 संवेदनशील इलाकों से 1,25,000 लोगों को शरणार्थी शिविरों में भेजने के लिए तैयार है। साथ ही जो लोग पड़ोसी शहरों में अपने दोस्तों और रिश्तेदारों के पास जाना चाहते हैं, उनके लिए अतिरिक्त बसें उपलब्ध होंगी।

लोगों के जानवरों के लिए भी एक अलग शिविर बनाया जाएगा।

लोगों ने सरकारी घोषणाओं पर बहुत कम भरोसा दिखाया और अपने पैरों पर भरोसा किया। मुख्यमंत्री की घोषणा के दिन शुरू हुआ लोगों के भोपाल से निकलने का सिलसिला अगले विकराल हो गया। 13 दिसंबर की शाम तक अभूतपूर्व पलायन करते हुए 1,00,000 से अधिक लोग शहर छोड़ चुके थे। पूरी रात बस अड्डे पर भीड़ रही और अधिकारियों ने सैकड़ों अतिरिक्त बसें बुलाई। लोग भोपाल से निकलने वाली भीड़ भरी बसों और ट्रेनों की छतों पर सवार होकर यात्रा कर रहे थे। कई लोग अपने जानवरों को पड़ोसी गांवों में ले गए। जब उनसे पूछा गया कि जब मुख्यमंत्री ने घोषणा की थी कि कोई खतरा नहीं है, तो वे शहर क्यों छोड़ रहे हैं, तो लगभग सभी ने कहा, “हम मरना नहीं चाहते।”

प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया (पीटीआई) की रिपोर्ट में कहा गया, “मुख्यमंत्री द्वारा संवेदनशील क्षेत्रों के रूप में पहचाने गए 13 इलाकों में केवल वे लोग ही बचे हैं जिनके पास अपने वाहन हैं या वे इतने गरीब हैं कि सुरक्षित स्थान पर जाने का खर्च वहन नहीं कर सकते।



यह स्वतः स्फूर्त पलायन अविश्वसनीय लेकिन सच है। यह अज्ञात भय से घिरे होने जैसा है, जो छूत की बुखार की तरह फैल रहा है। जब उन्हें बताया गया कि मुख्यमंत्री अर्जुन सिंह खुद ऑपरेशन के दौरान कीटनाशक संयंत्र में मौजूद रहेंगे, तो उन्होंने चुटकी ली, “उनके जैसे लोग उड़ सकते हैं। हमारा क्या होगा?”

अगले दिन भी पलायन जारी रहा। लोगों में दहशत इस हद तक फैल गई कि कई अस्पतालों में इलाज करा रहे लोग बड़ी संख्या में अपने बिस्तर छोड़कर चले गए। 14 दिसंबर की शाम तक शहर की लगभग एक चौथाई आबादी पलायन कर चुकी थी।

सरकार के शिविरों पर लोगों का भरोसा नहीं जगा। केवल 4,800 लोग ही वहां पहुंचे। शिविरों में पहुंचे लोग भी उतने ही डरे हुए थे जितने झुगियों में थे। इंदौर के दैनिक अखबार नई दुनिया ने लिखा, “अगर उनके पास पैसा, परिवार, दोस्त और रिश्तेदार होते तो वे भी इस बुरे शहर से बहुत दूर चले जाते। इन शिविरों में ज्यादातर भिखारियों ने शरण ली है।” अधिकारियों को दो खाली शिविरों को बंद करना पड़ा।

सुरक्षा प्रणाली

लोगों के डर के बीच सरकारी टीम ने निपटान प्रक्रिया के दौरान अतिरिक्त सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए तैयारी शुरू कर दी। विशेषज्ञों ने अखबारों के उत्सुक संवाददाताओं को बताया कि छह-चरणीय सुरक्षा प्रणाली बनाई गई है। हालांकि पहले चरण में कोई सुरक्षा प्रणाली नहीं थी। इसमें केवल वह प्रक्रिया थी जिसके द्वारा कीटनाशक कार्बोरिल को अल्फानाफथोल के साथ घातक गैस की प्रतिक्रिया करके बनाया जाता है। दूसरा, कारखाने में मानक वेंट स्क्रबर था जो पहले काम नहीं कर रहा था। इस प्रणाली में एकमात्र नयापान यह था कि स्क्रबर के दो तरफ रखे गए अग्निशामक होज का एक सेट था जो इसे ठंडा रखता था। अगर बहुत अधिक गैस स्क्रबर में आ जाती तो कार्बोस्ट सोडा के साथ प्रतिक्रिया से इसका तापमान बढ़ जाता। तीसरी सुरक्षा प्रणाली फिर से मानक फ्लेयर टावर थी।

विशेषज्ञों द्वारा तैयार की गई तीन नई प्रणालियां एमआईसी की पानी के साथ प्रतिक्रिया पर आधारित थीं, लेकिन उनकी कमजोरियों की बहुत आलोचनाएं हुईं। जैसे इसमें से पहली में तिरपाल का शामियाना शामिल था जो चिमनी को ढकता था जिसके माध्यम से एमआईसी बाहर निकलता था। इस शामियाना को लगातार गीला रखा जाना था ताकि कोई भी निकलने वाली गैस जो फ्लेयर टावर से जले नहीं, पानी के साथ प्रतिक्रिया करके हानिरहित डाइमिथाइल यूरिया में परिवर्तित हो जाए।

दूसरी व्यवस्था में 3 दिसंबर को सबसे ज्यादा प्रभावित कॉलोनी जयप्रकाश नगर की तरफ कारखाने की परिधि की दीवार पर जूट की चटाई टांगी गई थी। इसे भी गीला रखा जाना था ताकि कोई भी निकलने वाली गैस पानी के साथ प्रतिक्रिया कर सके। छठी सुरक्षा व्यवस्था में भारतीय वायुसेना के हेलीकॉप्टर प्लांट के ऊपर मंडराते रहते थे जो जरूरत पड़ने पर निकलने वाली गैस पर पानी का छिड़काव कर सकते थे। अगर इन सबके बावजूद तुरंत निकासी जरूरी हो जाती तो लोगों को सायरन बजाकर चेतावनी दी जाती और पांच मिनट के नोटिस पर सेना की टुकड़ियां मदद के लिए पहुंच जातीं।

जूट की चटाई पर खास तौर पर व्यंग्यात्मक टिप्पणी की गई। प्रफुल बिदवई ने कहा, “चारदीवारी के एक छोटे से हिस्से पर जूट की पतली सी बोरी बंधी हुई है, जिसे बड़े ही शानदार तरीके से “पांचवी सुरक्षा प्रणाली” कहा जाता है। हवा में लहराती हुई बोरी जमीन से 12 या 15 फीट से ज्यादा ऊपर नहीं पहुंचती। यह दुर्घटनावश गैस के रिसाव की स्थिति में गैस को रोकने के लिए काफी कम ऊंचाई है। वास्तव में अधिकारियों ने बिना किसी आधार के अनुमान लगाया है कि लीक होने वाली गैस भी एक निश्चित दिशा में आगे बढ़ेगी लेकिन यह जरूरी नहीं है (या जैसा कि वरदराजन कहते हैं “संभव है”) कि बोरी को फैक्टरी की पूरी परिधि की दीवार पर लगाया जाए।”

इन सुरक्षा प्रणालियों के अलावा अखबारों ने पूरे ऑपरेशन के प्रभारी पर भी टिप्पणी की। टाइम्स ऑफ इंडिया ने कहा, “सीएसआईआर के एस वरदराजन के नेतृत्व में भारतीय विशेषज्ञों की मौजूदगी के बावजूद इस बात पर बहुत कम संदेह है कि वास्तव में प्रभारी कौन है। भारतीय विशेषज्ञों की टीम अभी तक पूरी तरह से और सीधे तौर पर नियंत्रण में नहीं दिखती है। काम का विवरण



फोटो: विकास चौधरी / सीएसई

पिछले चार दशकों के दौरान गैस पीड़ितों की संख्या काफी बढ़ गई है

आवरण कथा

यूनियन कार्बाइड प्रबंधन पर छोड़ दिया गया है। जैसा कि डॉ. वरदराजन कहते हैं, “हम वास्तव में प्लांट को अच्छी तरह से नहीं जानते थे।” इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि वर्तमान ऑपरेशन में यूनियन कार्बाइड कॉरपोरेशन, यूएसए के प्रबंधकों की संलिप्तता स्पष्ट है।

यूनियन कार्बाइड इंडिया लिमिटेड (यूसीआईएल) के वे अधिकारी, जिन्हें त्रासदी के पहले दिन गिरफ्तार किया गया था, उन्हें 16 दिसंबर को इस शर्त पर जमानत पर रिहा कर दिया गया कि वे प्लांट में बची हुई गैस को निष्क्रिय करने में मदद करेंगे। निष्क्रिय करने वाले विशेषज्ञों में अमेरिका के डब्ल्यू वूमर शामिल थे, जिन्हें पहले प्लांट में प्रवेश से इस डर से मना कर दिया गया था कि वे सबूत नष्ट कर देंगे।

आस्था का विषय

विडंबना देखिए कि इतनी अत्याधुनिक तकनीक और विशेषज्ञता के बाद भी यह आस्था का मामला था। मुख्यमंत्री ने 15 दिसंबर की शाम को घोषणा की, “यूनियन कार्बाइड संयंत्र में जहरीली गैस को बेअसर करने के लिए ऑपरेशन का मंच तैयार है। भले ही इसका संचालन यूनियन कार्बाइड के लोगों द्वारा पूरी जिम्मेदारी लेते हुए किया जाना है, लेकिन इसके लिए हमें यानी मुझे ही इजाजत देनी होगी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह मेरे द्वारा लिए गए सबसे महत्वपूर्ण और पीड़ादायक निर्णयों में से एक है। ऐसे नितांत अकेलेपन में हमारे रचयिता (भगवान) में विश्वास से अधिक कुछ भी हमें प्रेरित नहीं करता है। भले ही मानव हृदय में आस्था हमेशा बनी रहती है, लेकिन इस समय यह पिछले कुछ दिनों की भयावह घटनाओं से बुरी तरह हिल गई है। उस आस्था को फिर से जगाना होगा। इसलिए इस ऑपरेशन को ऑपरेशन आस्था कहा जाएगा। आइए, हम इसकी सफलता के लिए प्रार्थना करें।”

रात भर ऑपरेशन की तैयारियां चलती रहीं। पानी के टैंकों और फायर ब्रिगेड की गाड़ियों ने हर सड़क को पानी से नहला दिया, हालांकि कोई नहीं जानता था कि इससे गैस का लोगों पर असर कैसे रुकेगा। ड्यूटी पर मौजूद पुलिसकर्मियों ने पानी से भरी बाल्टियां और छोटे तौलिये तैयार रखकर अपनी सुरक्षा की तैयारी की।

फैक्ट्री में ही, फायर टैंडरों ने जूट की जाली को गीला कर दिया। अन्य फायर टैंडरों ने प्लांट के एमआईसी सेक्शन को कवर करने वाली स्क्रीन पर पानी की धारें छोड़ीं। हर पांच से दस मिनट में एक हेलिकॉप्टर प्लांट के ऊपर पानी का छिड़काव करता हुआ मंडरा रहा था और कभी-कभी पड़ोसी कॉलोनियों के ऊपर भी। सुरक्षा उपाय के तौर पर इस्तेमाल करने के लिए प्लांट कर्मियों के लिए सैकड़ों ऑक्सीजन मास्क पहुंचाए गए।

16 दिसंबर को सुबह 8.30 बजे मुख्यमंत्री की बहुप्रचारित उपस्थिति के साथ ऑपरेशन शुरू हुआ। फैक्ट्री के गेट के बाहर भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष अटल बिहारी वाजपेयी (जो आगे चलकर प्रधानमंत्री बने) ने पुलिसकर्मियों से बहस की, जिन्होंने पहले तो उन्हें प्लांट में घुसने की अनुमति नहीं दी और फिर उन्हें अंदर जाने दिया। पहले दिन के अंत तक स्टोरेज टैंक नंबर 619 में अनुमानित 15 टन में से चार टन और स्टेनलेस स्टील के ड्रमों में 1.2 टन कीटनाशकों में परिवर्तित हो गए थे।

अगली सुबह फायर टैंडर और हेलिकॉप्टरों की वही दिनचर्या





सुरक्षा और तकनीकी
खामियों के कारण इसी
टैंक-610 से एमआईसी
लीक हुई

दोहराई गई। लोगों में विश्वास जगाने के लिए गेट के सामने दो सेना अधिकारी ब्रिगेडियर एनके मैनी और मेजर जीएस खनूजा खड़े थे, जिन्होंने 2 दिसंबर की सुबह लगभग 10,000 लोगों को निकालने के लिए अपनी जान जोखिम में डाली थी। उस दिन के अंत तक अन्य चार टन का उपयोग किया गया था। तीसरे दिन के अंत तक 12 टन का निपटान किया गया था, केवल चार टन और परिवर्तित करने के लिए बचा था। लेकिन उस दिन तक सरकारी टीम को यह भी पता चल गया था कि टैंक में फैक्ट्री के रिकॉर्ड में पहले बताई गई मात्रा से कहीं अधिक गैस थी। यह ऑपरेशन चार या पांच दिनों में खत्म होना था लेकिन शुरू होने के सात दिन बाद शनिवार को यह खत्म हो गया और करीब 24 टन गैस को परिवर्तित करना पड़ा, जो अनुमान से 50 प्रतिशत अधिक थी। यूनिशन कार्बाइड को यह भी नहीं पता था कि उसके पास कितनी गैस है।

सरकार की प्रतिक्रिया

सरकार का रवैया अनिश्चित और दुलमुल था। आने वाले दिनों में यह और भी अनिश्चित हो गया। राज्य सरकार के अनुरोध पर केंद्र सरकार ने डॉक्टरों की एक टीम भेजी, उसके बाद केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सीबीआई) की एक टीम भेजी गई। जिला मजिस्ट्रेट ने 3 दिसंबर को ही फैक्ट्री को बंद करने का आदेश दिया और भोपाल में कंपनी के पांच अधिकारियों को गिरफ्तार कर लिया। त्रासदी की न्यायिक जांच की घोषणा की गई।

अगले दिन दिल्ली से केमिकल इंडस्ट्री और पर्यावरण विशेषज्ञों की दो टीमें भेजी गईं। नए प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने अपना चुनाव अभियान बीच में छोड़कर भोपाल के लिए उड़ान भरी। इन रूटीन नौकरशाही प्रतिक्रियाओं के अलावा राज्य या केंद्र सरकार ने पहले दो दिनों के दौरान कुछ विशेष नहीं किया। सेना इसका अपवाद जरूर थी। उस सुबह अपने घरों से भागने वाले 1,00,000 से अधिक लोगों को कोई मदद नहीं मिली।

भोपाल के पुलिस अधीक्षक ने दावा किया कि पुलिस ने जो भी वैन और ट्रक उपलब्ध थे, उनका इस्तेमाल किया और लोगों को भोपाल से बाहर निकाला। लेकिन उन्होंने तर्क दिया कि चूंकि प्रशासन को गैस रिसाव की प्रकृति का कोई सुराग नहीं था, इसलिए वे ज्यादा कुछ नहीं कर सकते थे।

सत्ता का केंद्रीकरण और पहल की कमी आम दिनों में ही स्पष्ट दिखाई देती है। दबाव में वह सचमुच धाराशायी हो गई। प्रशासन में बैठे लोगों ने अपनी पूरी ताकत झोंक दी, लेकिन कोई समग्र योजना नहीं बनाई गई। उन शुरुआती कुछ घंटों में पूरी तरह से भ्रम की स्थिति थी। रिसाव की पुष्टि हो जाने के बाद सरकार ने शहर को खाली करने का फैसला किया। लेकिन किसी ने इस घोषणा को आम जनता तक नहीं पहुंचाया। केवल अभिजात वर्ग के लोगों को ही इसकी जानकारी मिली। इन लोगों में मंत्री और वे लोग शामिल थे जो प्लांट से दूर कॉलोनियों में रहते थे और उनमें भी ज्यादातर के पास टेलीफोन थे। बाकी लोगों को खुद ही अपना खयाल रखना पड़ा।

सचिवों और विभागाध्यक्षों की पहली समन्वय बैठक 4 दिसंबर की रात को बुलाई गई, यानी 40 घंटे से भी अधिक समय बाद। सौभाग्य से राष्ट्रीय अंधत्व नियंत्रण कार्यक्रम के कारण शहर में दवाओं का स्टॉक उपलब्ध था।

दो दिनों तक लगभग 2,000 जानवरों के शव सड़कों और घरों में बिखरे पड़े रहे और हैजा फैलने की आशंका पैदा हो गई थी। आखिर में सेना और भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड से क्रेन और डंपर मंगाए गए। एक क्रेन का तार एक मृत भैंस को उठाते समय टूट गया। भैंसों की लाशें इतनी फूल गई थीं कि उन्हें झुग्गी-झोपड़ियों के घरों के संकरे दरवाजों से बाहर नहीं निकाला जा सकता था। उन्हें निकालने के लिए 32 घरों की दीवारें तोड़नी पड़ीं। अंत में मृत जानवरों को शहर से पांच किलोमीटर दूर ले जाया गया और बुलडोजर से खोदी गई 3 मीटर गहरी खाइयों में फेंक दिया गया और उसमें चार ट्रक नमक, दो ट्रक ब्लीचिंग पाउडर, 10 ट्रक चूना और आधा ट्रक कास्टिक सोडा डाला गया।

महामारी का डर

तीन सप्ताह बाद महामारी फैलने का डर फिर से फैल गया क्योंकि लाखों मक्खियां ने अनुचित तरीके से निपटाए गए शवों से आकर्षित होकर शहर में धावा बोल दिया। सेना ने शुरू में जानवरों के शवों को हटाने और उनका निपटान करने में मदद की थी, लेकिन अधिकारियों ने स्वीकार किया कि सफाई कर्मचारियों की कमी के कारण सभी जानवरों को दफनाया नहीं जा सका। अधिकांश नगरपालिका कर्मचारी गैस से प्रभावित थे और सफाई कर्मचारियों को दूसरे शहरों से बुलाना पड़ा।

लोगों के सवालों के जवाब में प्रशासन की रवैया संवेदनहीन था। सरकार ने दूसरे दिन ही ऑल इंडिया रेडियो पर समाचार बुलेटिन प्रसारित करना शुरू कर दिया कि स्थिति तेजी से सामान्य हो रही है और सब सुरक्षित है। पत्रकारों ने मुख्यमंत्री को बताया कि यह यूनिनयन कार्बाइड के अधिकारियों की घोषणाओं जैसा लग रहा था। लोग जिस हवा में सांस लेते हैं, जिस पानी को पीते हैं और जो मांस, आटा, मछली और सब्जियां खाते हैं, उन सबको संदेह की नजर से देख रहे थे। वे जानना चाहते थे कि क्या मरे हुए जानवरों से महामारी फैलेगी, क्या कारखाने में कोई गैस बची है और क्या यह फिर से लीक हो सकती है।

लोगों को पूरी तरह भरोसे में लेने के बजाय गुमराह करने वाले और विरोधाभासी बयानों की झड़ी लग गई। एक अखबार की रिपोर्ट ने बताया कि 4 दिसंबर को भोपाल दौरे पर राजीव गांधी ने घोषणा की थी कि पानी की जांच की गई है और उसमें कोई जहरीला पदार्थ नहीं पाया गया है। लेकिन बाद में वरदराजन ने खुलासा किया कि जांच 5 दिसंबर को ही शुरू हुई थी। इसलिए हैरानी की बात नहीं है कि जब बची हुई गैस को बेअसर करने की बात सामने आई तो लोग अभूतपूर्व संख्या में शहर छोड़कर भाग गए।

3 दिसंबर को पहुंची सीबीआई की टीम ने तुरंत प्लांट के

अधिकारियों और सुपरवाइजरी में तैनात कर्मचारियों से पूछताछ शुरू कर दी। सीबीआई ने कार्बाइड के अधिकारियों को बिना अनुमति के भोपाल न छोड़ने की चेतावनी दी और एमआईसी के भंडारण और रिलीज से संबंधित सभी लॉग बुक और जरूरी कागजात जब्त कर लिए। जब यूसीसी के अमेरिकी तकनीकी विशेषज्ञों की टीम पूर्व कार्य प्रबंधक डब्ल्यू वूमर के नेतृत्व में दुर्घटना के तीन दिन बाद भोपाल पहुंची तो सरकार ने उन्हें प्लांट में प्रवेश करने से रोक दिया क्योंकि संदेह था कि वे सबूत नष्ट कर सकते थे।

गिरफ्तारी का मामला

सरकार ने जिस तरह यूसीसी के अध्यक्ष वॉरेन एंडरसन की गिरफ्तारी का मामला संभाला, वह हास्यास्पद था। जैसे ही एंडरसन यूसीआईएल के अध्यक्ष केशव महिंद्रा और प्रबंध निदेशक वीपी गोखले के साथ भोपाल पहुंचे, तीनों को हिरासत में ले लिया गया। उन्हें भारी पुलिस सुरक्षा के साथ कार में बिठाकर कंपनी के गेस्टहाउस ले जाया गया और अलग-अलग कमरों में रखा गया, जहां से टेलिफोन लाइन पहले ही काट दी गई थीं।

उन पर कई तरह के आरोप लगाए गए, जिनमें से कई आरोप गैर-जमानती हैं और आजीवन कारावास या पांच से 10 साल तक की सजा हो सकती है। एक सरकारी अधिकारी ने कहा कि गिरफ्तारियां “बड़ी त्रासदी को जन्म देने वाली घटनाओं की जवाबदेही के तौर” के लिए की गई थीं। मुख्यमंत्री ने खुद घोषणा की, “यह सरकार त्रासदी के प्रति मूकदर्शक नहीं रह सकती और हजारों निर्दोष नागरिकों के प्रति अपना कर्तव्य जानती है।” उन्होंने आरोप लगाया कि नागरिकों का जीवन “यूनिनयन कार्बाइड के प्रबंधन के क्रूर और लापरवाहीपूर्ण रवैये के कारण दर्दनाक रूप से प्रभावित हुआ है।” एक भारतीय समाचार एजेंसी की प्रारंभिक विज्ञप्ति में यहां तक कहा गया कि बहुराष्ट्रीय यूसीसी के अधिकारियों को “मृत्युदंड की सजा दी जा सकती है।” इसके लिए वाइट हाउस तक में विरोध प्रदर्शन किए। लेकिन यह दिलेरी शुरू होते ही खत्म हो गई। गिरफ्तारी के छह घंटे के भीतर एंडरसन को बिना मजिस्ट्रेट के सामने पेश किए (जो कानून के तहत जरूरी है) पूरी गोपनीयता के साथ भोपाल से ले जाया गया। उन्हें 20,000 रुपए की मामूली जमानत राशि के साथ सरकारी विमान में बिठाया गया और नई दिल्ली ले जाया गया। इस घटना के बाद मुख्यमंत्री ने कहा, “जो कुछ भी किया गया है वह कानून के दायरे में है... हमने सार्वजनिक हित में उन्हें जाने दिया। ऐसा नहीं है कि मुझे हिंसा का डर था, लेकिन ऐसा हो सकता था।” उनकी इन बातों से बहुत कम लोग ही प्रभावित हुए।

प्रशासन का रवैया संवेदनहीन था। सरकार ने दूसरे दिन ही रेडियो पर समाचार बुलेटिन प्रसारित करना शुरू कर दिया कि स्थिति तेजी से सामान्य हो रही है और सब सुरक्षित है। यह यूनिनयन कार्बाइड के अधिकारियों की घोषणाओं जैसा लग रहा था। लोग जिस हवा में सांस लेते हैं, जिस पानी को पीते हैं और जो मांस, आटा, मछली और सब्जियां खाते हैं, उन सबको संदेह की नजर से देख रहे थे

त्रासदी ने कम की उम्र

21 वर्ष या उससे अधिक उम्र के युवाओं को सबसे अधिक कष्ट भोगना पड़ा

विवेक मिश्रा

भोपाल गैस त्रासदी के संपर्क में आने वाले और फिर बच जाने वाले लोगों की न सिर्फ जीवन अवधि कम हुई बल्कि बच जाने वाले पीड़ितों को जल्दी मृत्यु हो जाने के शीर्ष जोखिम का भी सामना करना पड़ा है। मिथाइल आइसोसाइनेट (एमआईसी) जहरीली गैस रिसाव के शिकार हुए ऐसे लोग जो 21 वर्ष या उससे अधिक उम्र के थे, उन्हें यह कष्ट सबसे ज्यादा उठाना पड़ा है। वहीं, महिलाओं के मुकाबले पुरुषों में यह ज्यादा देखा गया।

जुलाई, 2023 में पबमेड जर्नल पर “सर्वाइवल एनालिसिस फॉर कोहर्ट ऑफ भोपाल गैस डिजास्टर विक्टिम ड्यूरिंग 1985-2015” शीर्षक से प्रकाशित अध्ययन में उन व्यक्तियों की उत्तरजीविता का मूल्यांकन किया गया जो जहरीली गैस के संपर्क में थे। इस अध्ययन में ऐसे लोगों के एक समूह को उन समूहों के साथ तुलना की गई जो गैर रिसाव के संपर्क में नहीं थे। इसका मकसद यह समझना था कि गैस के संपर्क, लिंग, और आयु (मध्यम आयु) जैसे कारक मृत्यु दर को कैसे प्रभावित करते हैं।

इस अध्ययन में कुल 92,320 व्यक्तियों के डेटा का विभिन्न मॉडल के आधार पर 30 वर्षों (365 महीनों) का विश्लेषण किया गया। अध्ययन के मुताबिक, गैस पीड़ित समूह के पुरुषों और 21 वर्ष से ऊपर के व्यक्तियों को उच्च मृत्यु दर का सामना करना पड़ा।

इस अध्ययन में पाया गया कि 365 महीने (लगभग 30 वर्षों) की अवधि के दौरान 6,609 व्यक्तियों की मृत्यु हुई और कुल मृत्यु दर 7.2 फीसदी थी। इन व्यक्तियों की मध्य आयु 40 वर्ष थी। इन मरने वालों में 5,540 व्यक्ति गैस के संपर्क में आए क्षेत्रों से थे जबकि 1,159 मरने वाले व्यक्तियों का संपर्क उन क्षेत्रों से था जो गैस के संपर्क में नहीं आए थे।

अध्ययन बताता है कि त्रासदी के बाद जहरीली गैस से संपर्क में आए समूह के पीड़ितों का औसत उत्तरजीविता समय 344.5 महीने थी, जबकि ऐसा समूह जो गैस पीड़ित नहीं था उसका औसत उत्तरजीविता समय 349.5 महीने था। यानी जो गैस रिसाव के पीड़ित थे वह पांच महीने कम जी सके। करीब 30 वर्षों के अंतराल में मृत्यु दर का यह अंतर कम दिखाई पड़ता है। हालांकि, शुरुआती वर्षों में मृत्यु दर काफी अधिक थी, लेकिन बाद में यह स्थिर हो गई। इससे यह संकेत मिलता है कि समय के साथ, चिकित्सा सुविधाओं और सरकारी योजनाओं के कारण उत्तरजीविता में सुधार हुआ है।

अध्ययन में यह देखा गया कि पहले चरण यानी 0 से 100 महीने और दूसरे चरण यानी 101 से 300 महीने की अवधि के दौरान, प्रभावित समूह की सर्वाइवल दर कम थी, जबकि गैर प्रभावित समूह में यह अधिक थी। तीसरे चरण यानी 301 से 400 महीने के दौरान दोनों समूहों में मृत्यु दर लगभग समान थी। इससे यह पता चलता है कि शुरुआती चरणों में प्रभावित क्षेत्रों में मृत्यु दर अधिक थी, जबकि बाद में यह स्थिर हो गई।

वहीं, अध्ययन में पाया गया कि पुरुषों की तुलना में महिलाओं की उत्तरजीविता दर अधिक थी। साथ ही 21 वर्ष और उससे अधिक आयु के व्यक्तियों की उत्तरजीविता दर 20 वर्ष से कम आयु के व्यक्तियों की तुलना में कम थी।

वहीं, गैस से संपर्क में आए व्यक्तियों को मृत्यु का जोखिम

1.30 गुना अधिक था। अध्ययन में पाया गया कि 1986-2000 और 2001-2015 के बीच, भोपाल गैस पीड़ितों में श्वसन संबंधी समस्याएं सबसे सामान्य मृत्यु का कारण थीं, जबकि गैर-संक्रमित समूह में यह दर कम थी। वहीं, समय के साथ हृदय और रक्तवाहिनी रोग (सर्कुलेटरी सिस्टम) और तंत्रिका तंत्र से संबंधित मृत्यु दर में वृद्धि देखी गई।

इस अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि उम्र और लिंग जैसे जैविक कारक मृत्यु दर को प्रभावित करते हैं और गैस से संपर्क किए गए व्यक्तियों के लिए दीर्घकालिक स्वास्थ्य देखभाल की आवश्यकता है। अध्ययन के मुताबिक गैस रिसाव के शिकार लोगों की उम्र

अब 30 से 99 वर्ष के बीच हो गई है, और वे अब वृद्धावस्था के स्वास्थ्य मुद्दों जैसे हृदय रोग, स्ट्रोक, मधुमेह, और कैंसर के जोखिम में हैं।

इस रिसर्च पेपर को मध्य प्रदेश स्थित आईसीएमआर इंडियन इंस्टीट्यूट फॉर रिसर्च इन एनवायरमेंटल हेल्थ के डिवीजन ऑफ बायोस्टैटिक्स एंड बायोइन्फोरमेटिक्स के सुशील सिंह और धर्मराज और आईसीएमआर इंडियन इंस्टीट्यूट फॉर रिसर्च इन एनवायरमेंटल हेल्थ के डिवीजन ऑफ एनवायरमेंटल हेल्थ एंड एपिडेमोलॉजी के योगेश साबदे व राजनारायणरामशंकर तिवारी व तमिलनाडु में चेन्नई स्थित स्कूल ऑफ पब्लिक हेल्थ, आईसीएमआर नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एपिडेमोलॉजी के मधनराज कल्याणसुंदरम ने संयुक्त रूप से तैयार किया है।

आवरण कथा

सरकार ने सबसे खराब प्रदर्शन राहत कार्य में किया। 9 दिसंबर को सरकार ने सामान्य चोटों के लिए 100 रुपए और गंभीर रूप से घायल व्यक्तियों के लिए 2,000 रुपए की तत्काल राहत की घोषणा की। इसने तुरंत राजनीतिक रंग ले लिया। हमीदिया अस्पताल में कांग्रेस (आई) के पार्षद ने डॉक्टरों से एक मरीज को दोबारा भर्ती करने पर जोर दिया, जबकि डॉक्टरों का आरोप था कि मरीज पांच दिन तक लगातार अस्पताल में भर्ती रहकर 2,000 रुपए की राहत राशि लेना चाहता था, जबकि वह छुट्टी के लिए फिट था। डॉक्टरों ने इस राजनीतिक हस्तक्षेप पर नाराजगी जताई और हड़ताल पर चले गए। पार्षद के माफी मांगने पर ही वे शांत हुए। हड़ताल के एक पोस्टर पर लिखा था, “कांग्रेस का यह बाहुबल एमआईसी से भी ज्यादा घातक है।”

राहत राशि के वितरण को लेकर अखबारों में भी काफी नाराजगी की खबर छपी। एक गैस पीड़ित महिला जिसकी आंखें

बुरी तरह प्रभावित हुई थीं, वह 200 रुपए की मामूली राहत राशि वापस करना चाहती थी। आर्थिक सहायता क्रॉसड चेक में दी गई थी। इन चेक को भुनाने के लिए पीड़ितों को पहले अपनी पहचान करानी पड़ी और 20 रुपए जमा करके बैंक में खाता खोलना पड़ा।

असंतोष और राहत

लोगों ने अपना बढ़ता हुआ असंतोष कई तरीकों से जाहिर किया। गैस प्रभावित विभिन्न इलाकों में युवाओं ने मेडिकल टीमों का घेराव शुरू कर दिया। आपदा के 10 दिन से भी कम समय में गुस्साए युवा इकॉनॉमिक टाइम्स के रिपोर्टर को वस्तुस्थिति दिखाने के लिए अपने घरों में ले गए। उसने अपनी रिपोर्ट में कहा, “लगभग हर घर अस्पताल के वार्ड जैसा लग रहा था।” उसने आगे लिखा, “लगभग हर कोई लगातार खांस रहा था, सीने में दर्द और जलन हो रही थी। पिछले दो-तीन दिनों से इन लोगों को दवा देने या उनकी



जांच करने कोई नहीं आया था। कई बीमार लोग अपने बिस्तर से उठने की स्थिति में भी नहीं थे। उनमें से अधिकांश दिहाड़ी मजदूर हैं। उन्हें खाने के लिए कुछ नहीं मिल रहा था। उनके पास अन्न खरीदने के लिए कोई संसाधन नहीं था। अगर उन्होंने अनाज खरीदा भी तो महिलाएं शारीरिक रूप से खाना पकाने की स्थिति में नहीं थीं। जैसे ही वे आग के पास बैठीं, उनकी खांसी बढ़ गई। ये लोग आमतौर पर एक ऐसे आर्थिक वर्ग से आते हैं जो कुपोषण से पीड़ित हैं। अगर उन्हें ऐसी खराब शारीरिक स्थिति में भोजन से वंचित किया जाता है, तो उनमें कोई प्रतिरोध नहीं बचेगा।”

9 दिसंबर को मुख्यमंत्री आवास के सामने प्रदर्शन भी हुआ। प्रभावित लोगों में से अधिकांश गरीब, दिहाड़ी मजदूर थे और वे एमआईसी के प्रभाव से हफ्तों बाद भी पीड़ित पाते थे। लगातार सांस लेने में तकलीफ उनकी मुख्य समस्या थी। उनके लिए मेहनत करना असंभव हो गया, उन्हें धूप में एक किमी चलने पर भी चक्कर आने

लगे। काम और पैसे के बिना वे खुद को और अधिक बीमार, कमजोर और भूखे पाते थे। वे भुखमरी के कगार पर पहुंच गए थे।

इस पूरे प्रकरण ने बचे हुए लोगों, उनके स्वास्थ्य और उनकी अर्थव्यवस्था को पूरी तरह से तहस-नहस कर दिया। 30 वर्षीय ठेले वाले साबिर अहमद ने कहा कि वह गैस रिसाव के लगभग तीन सप्ताह बाद काम करने निकला था। पांच सदस्यों के परिवार को अकेले पालने वाला यह शख्स बीमार होने के बावजूद जल्दी काम पर लौट आया। कुली बिलाल अहमद भी कुछ ऐसी ही स्थिति में थे। उनका 3 दिसंबर को हमीदिया अस्पताल में इलाज हुआ था, लेकिन उसके बाद कुछ नहीं हुआ। उन्हें अब भी आंखों में जलन, सीने में दर्द और घबराहट का अनुभव हो रहा था और काम करना असंभव लग रहा था। खराद मशीन ऑपरेटर 34 वर्षीय श्रवण सिंह को अपना पुराना पेशा जिससे उन्हें प्रतिदिन 25 रुपए मिलते थे, अब थका देने वाला लगने लगा। उन्हें फुटपाथ पर भुने हुए चने बेचने पड़े, जिससे चार लोगों के अपने परिवार का भरण-पोषण करने के लिए प्रतिदिन 10 रुपए से भी कम की कमाई हो पाती थी। महिलाओं की हालत और बदतर थी। उन्हें लगातार सिर दर्द और चक्कर आने की समस्या बनी रहती थी और वे लंबे समय तक किसी भी चीज पर ध्यान केंद्रित नहीं कर पाती थीं। आग के सामने खाना पकाने से उन्हें लकड़ी के धुएं के संपर्क में आना पड़ता था और उनकी आंखों में जलन बढ़ जाती थी, जिससे एक बार में दो से अधिक रोटियां पकाना असंभव हो जाता था। पास के कुएं या नल से पानी लाना, उन्हें पूरे दिन लिए थका देता था। कई महिलाओं ने अपने बेटों और पतियों को खो दिया था और अब उनके लिए जीवित रहना असंभव था, खासकर जब वे बीमारी में काम नहीं कर सकती थीं। यूनियन कार्बाइड के सामने जेपी नगर में रहने वाली कई महिलाएं बीड़ी मजदूर थीं। उनमें से कुछ बीड़ी मजदूरों ने पाया कि उनसे बीड़ी खरीदने वाला व्यक्ति मर चुका है और इसलिए अब बीड़ी बनाने का कोई फायदा नहीं था। भैंस जैसे जानवरों की सामूहिक मौत ने उन लोगों की कमर तोड़ दी जिनकी आजीविका पूरी तरह से इन पशुओं पर टिकी थी।

लंबा इंतजार

खुद को ठीक करने के उतावलेपन में लोग सरकार द्वारा स्थापित मोबाइल क्लीनिक, डिस्पेंसरी और पॉलीक्लिनिक के अलावा स्वैच्छिक एजेंसियों की ओर से स्थापित एक दर्जन अन्य डिस्पेंसरी के सामने लंबी कतारों में बैठे रहे। इन केंद्रों पर उन्हें वही उपचार, एंटीबायोटिक्स और दवाएं मिलीं, जो कुछ समय बाद फायदे की बजाय तकलीफ देने लगीं। जिन लोगों की तकलीफ बेहद बढ़ गई उन्होंने बड़े निजी अस्पतालों का रुख किया, लेकिन वहां से उन्हें चलता कर दिया गया। अन्य लोग घर के बिस्तर पर पड़े रहे। सरकार और भोपाल में चिकित्सा समुदाय ने एक पखवाड़े से भी कम समय में कह दिया कि सबसे बुरा समय बीत चुका है। उनका कहना था कि अब लोग अब मुख्य रूप से झुग्गी बस्ती में व्याप्त एनीमिया और टीबी जैसी आम बीमारियों की ही शिकायत कर रहे हैं। असहाय लोगों ने खुद को एक निर्दयी बहुराष्ट्रीय कंपनी और एक नकारा व समान रूप से निर्दयी सरकार के बीच फंसा हुआ पाया। प्रभावित बास्तियों में काम करने वाली स्वैच्छिक एजेंसियों ने अनगिनत स्वास्थ्य समस्याओं की सूचना दी। नागरिक राहत और पुनर्वास समिति के आयोजक फिल्म



यूनियन कार्बाइड फैक्ट्री के उपकरण हादसे के वक्त काम नहीं कर रहे थे। इनसेट में फैक्ट्री में तैयार उत्पाद

खून में घुल गई जहरीली गैस

पीड़ितों का खून “चेरी रेड” रंग का पाया गया, जिसने हाइड्रोजन साइनाइड विषाक्तता का संकेत दिया

विवेक मिश्रा

भोपाल त्रासदी के 26 साल बाद भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद (आईसीएमआर) ने अपनी एक टेक्निकल रिपोर्ट जारी की। इस रिपोर्ट का नाम था “हेल्थ इफेक्ट्स ऑफ द टॉक्सिक गैस लीक फ्रॉम यूनियन कार्बाइड मिथाइल आइसोसाइनेट प्लांट इन भोपाल।” यह रिपोर्ट 1984 से 1992 तक पैथोलॉजी एंड टॉक्सिकोलॉजी अध्ययन पर आधारित थी। इस रिपोर्ट में कई तथ्य आधिकारिक तौर पर पहली बार सामने आए। रिपोर्ट के मुताबिक, भोपाल गैस त्रासदी के बाद दिसंबर, 1984 में 731 शवों की ऑटोप्सी हुई। यह पहली बार था जब इतनी बड़ी संख्या में व्यवस्थित ऑटोप्सी और विस्तृत अध्ययन किए गए जिसमें कई चौंकाने वाले नतीजे सामने आए। त्रासदी के बाद कंपनी के द्वारा लगातार यह कहा जाता रहा कि एमआईसी साइनाइड (जहर) नहीं बनाती। इसलिए पीड़ितों को तत्काल कोई राहत वाला उपचार नहीं मिला, जिससे कई लोगों की जान बच सकती थी। हालांकि, पीड़ितों का खून “चेरी रेड” रंग का पाया गया, जिसने हाइड्रोजन साइनाइड विषाक्तता का संकेत दिया।

हालांकि, बाद में विषैली एमआईसी और उसके सह उत्पादों में से एक हाइड्रोजन साइनाइड (एचसीएन) को विषाक्तता का मुख्य कारण माना गया और विषाक्तता को कम करने के लिए भोपाल गैस पीड़ितों पर तत्काल सोडियम थायोसल्फेट (एनएटीएस) इंजेक्शन का इस्तेमाल किया गया। एनएटीएस एक चिकित्सकीय यौगिक है जो साइनाइड विषाक्तता के उपचार में प्रभावी है। भोपाल गैस त्रासदी के दौरान इसकी प्रभावशीलता को पहचानना और लागू करना एक महत्वपूर्ण कदम था। दरअसल एनएटीएस साइनाइड के साथ प्रतिक्रिया करके थायोसाइनेट बनाता है जो विषहीन होता है और शरीर से मूत्र द्वारा आसानी से निकल जाता है। एनएटीएस के इंजेक्शन से पीड़ितों में श्वसन और तंत्रिका संबंधी लक्षणों में तत्काल सुधार देखा गया। पहली बार विषाक्तता कम करने के लिए “डबल ब्लाइंड” क्लिनिकल परीक्षण किया गया था। यह परीक्षण एक वैज्ञानिक पद्धति है, जिसका उपयोग किसी दवा या उपचार की प्रभावशीलता और सुरक्षा का मूल्यांकन करने के लिए किया जाता है। यह परीक्षण इसलिए “डबल-ब्लाइंड” कहा गया क्योंकि इसमें न तो मरीज और न ही डॉक्टर या शोधकर्ता को पता होता है कि कौन सा उपचार दिया जा रहा है।

एनएटीएस थेरेपी के बाद पीड़ितों के मूत्र में थायोसाइनेट के स्तर में वृद्धि देखी गई जिससे यह पुष्टि हुई कि साइनाइड का विषहरण सफलतापूर्वक हो रहा है। यदि पहले ही यह पता होता कि एमआईसी

साइनाइड पैदा कर रही है तो एनएटीएस का उपचार तत्काल किया जा सकता था क्योंकि एनएटीएस की प्रभावशीलता तभी उच्चतम होती है जब इसे विषाक्तता के तुरंत बाद दिया जाए। देरी होने पर परिणाम सीमित हो सकते हैं। आईसीएमआर की इस टेक्निकल रिपोर्ट ने यह पहली बार उजागर किया गया कि विषैली गैस एमआईसी ने भोपाल गैस त्रासदी पीड़ितों के रक्त और ऊतकों में एन-कार्बमॉयलेशन और एस-कार्बमॉयलेशन किया। जब मिथाइल आइसोसाइनेट जैसा कोई रसायन शरीर में प्रवेश करता है तो वह शरीर के भीतर मौजूद प्रोटीन और एंजाइम या अन्य जैविक पदार्थों के साथ प्रतिक्रिया करता है और उन पर एक नया रासायनिक समूह जोड़ देता है। इस प्रक्रिया को कार्बमॉयलेशन कहते हैं। यह नया रसायन समूह शरीर के प्रोटीन और एंजाइम के सामान्य कामकाज को प्रभावित करते हैं।

शरीर में प्रोटीन सामान्य रूप से काम करते हैं, लेकिन

भोपाल गैस त्रासदी केवल एमआईसी की विषाक्तता का परिणाम नहीं थी, बल्कि इसके गर्मी के विघटन से उत्पन्न यौगिकों का भी असर था

कार्बमॉयलेशन प्रक्रिया होने पर उनकी संरचना हमेशा के लिए बदल जाती है। यह उनके कार्यों को बाधित कर सकता है, जैसे ऑक्सीजन पहुंचाने वाला हीमोग्लोबिन सामान्य रूप से काम नहीं कर पाता। शरीर में मौजूद एक अहम एंटीऑक्सीडेंट ग्लूटाथायोन पर भी इसका असर पड़ता है। कार्बमॉयलेशन के कारण यह विषाक्त पदार्थों को बेअसर करने की क्षमता खो सकता है। एमआईसी ने कार्बमॉयलेशन के जरिए पीड़ितों के स्वास्थ्य पर दोनों असर डाले। उनके शरीर में जो प्रोटीन और ऊतकों में बदलाव आए वह अब अपनी सामान्य स्थितियों में कभी लौट नहीं पाएंगे।

रिपोर्ट के मुताबिक, अधिकांश गैस पीड़ितों के फेफड़ों में गंभीर सूजन और उनमें खून का रिसाव था। साथ ही दिमाग में सूजन, छोटे रक्तस्राव और अन्य अंगों में भी क्षति पाई गई। इन तात्कालिक असर के अलावा सर्वाइवर लंबे समय तक श्वसन और नेत्र समस्याओं से जूझते रहे। इनमें अस्थिमा, आंखों की रोशनी कम होना और संक्रमण का खतरा बढ़ा। गर्भपात, भ्रूण विकास में बाधा और जन्मजात विकार भी रिपोर्ट किए गए। आईसीएमआर की यह टेक्निकल रिपोर्ट स्पष्ट तौर पर बताती है कि कानूनी बाधाओं के कारण वैज्ञानिक निष्कर्ष देरी से प्रकाशित हुए। साथ ही एमआईसी टैंक के अवशेषों में पाए गए कई अज्ञात रसायनों का विषाक्त प्रभाव अभी भी पूरी तरह से समझा नहीं गया है। इस रिपोर्ट ने यह साबित किया कि भोपाल गैस त्रासदी केवल एमआईसी की विषाक्तता का परिणाम नहीं थी, बल्कि इसके गर्मी से विघटन (प्रायोलाइसिस) से उत्पन्न यौगिकों का भी असर था।

कई महिलाओं ने अपने बेटों और पतियों को खो दिया था और अब उनके लिए जीवित रहना असंभव था, खासकर जब वे बीमारी में काम नहीं कर सकती थीं। यूनियन कार्बाइड के सामने जेपी नगर में रहने वाली कई महिलाएं बीड़ी मजदूर थीं। उनमें से कुछ बीड़ी मजदूरों ने पाया कि उनसे बीड़ी खरीदने वाला व्यक्ति मर चुका है और इसलिए अब बीड़ी बनाने का कोई फायदा नहीं था

निर्माता तपन बोस और सुहासिनी मुले ने कहा, “हमारी महिला स्वयंसेवकों ने पाया है कि एमआईसी से पीड़ित लगभग हर महिला सांस और गैस्ट्रिक जटिलताओं के अलावा प्रजनन संबंधी गंभीर विकारों से पीड़ित है। वे पिछले छह हफ्तों के दौरान पांच मासिक धर्म स्त्रावों की शिकायत कर चुकी हैं। ज्यादातर महिलाओं को पेट दर्द और अत्यधिक अम्लीय योनि स्त्राव की शिकायत है जो जलन पैदा करता है। गर्भवती महिलाओं को तो और अधिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।” सरकार ने समिति के इस सुझाव पर कोई ध्यान नहीं दिया कि प्रभावित क्षेत्रों में पांच निदान और उपचार केंद्र स्थापित किए जाएं।

सरकार ने खुद भी जखम और उभर रहे नए लक्षणों का कोई गंभीर दस्तावेजीकरण करने का प्रयास नहीं किया। एक्स-रे, रक्त, थूक या मूत्र के नमूने एकत्र करने, उनका विश्लेषण करने और लोगों को निगरानी में रखने का कोई प्रयास नहीं किया गया। इससे भी बदतर यह कि मामला पूरी तरह गोपनीय बना दिया गया। जब लोग बीमारियों की शिकायत कर रहे थे, तब भी सरकार ने सभी सूचनाओं को दबाने की कोशिश की। एक रिपोर्ट के अनुसार, भोपाल में गांधी मेडिकल कॉलेज के डीन ने जनवरी के मध्य में निजी चिकित्सकों के प्रतिनिधियों की एक बैठक बुलाई थी, जिसमें उनसे कहा गया कि वे एमआईसी विषाक्तता से संबंधित कोई भी तथ्य राज्य सरकार के अलावा किसी और से साझा न करें।

जन विरोध

जनवरी की शुरुआत में माहौल आक्रोश से भर गया। 1 जनवरी को नागरिक राहत और पुनर्वास समिति ने शहर के मुख्य मार्ग पर चक्काजाम कार्यक्रम आयोजित किया। 3 जनवरी को वैज्ञानिकों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और ट्रेड यूनियन कार्यकर्ताओं द्वारा संगठित जहरीली गैस कांड संघर्ष मोर्चा ने धिक्कार दिवस मनाया और मुख्यमंत्री के घर के सामने धरना दिया। दिन भर का धरना 10 दिनों तक चलने वाले कार्यक्रम में बदल गया और आखिरकार रेल रोको कार्यक्रम में बदल गया। धरने में शामिल कई लोगों को स्टेशन तक पहुंचने से पहले ही पुलिस ने उठा लिया और कई दिनों तक जेल में रखा। कुछ दिनों बाद मुख्यमंत्री ने अपना बहुचर्चित धन्यवाद दिवस मनाया।

लोगों की नाराजगी का सबसे बड़ा कारण सरकार द्वारा अनुग्रह राशि के वितरण में देरी थी। सरकार ने घोषणा की थी कि प्रत्येक मृतक के उत्तराधिकारी को 10,000 रुपये, गंभीर रूप से प्रभावित लोगों को 2,000 रुपये और मामूली रूप से प्रभावित लोगों को 100 से 1,000 रुपये दिए जाएंगे। शुरुआत में सरकार ने भुगतान में जल्दबाजी दिखाई और 5,724 पीड़ितों को 36.67 लाख रुपये का

नगद भुगतान किया गया। लेकिन 7 दिसंबर को सरकार ने वितरण को स्थगित कर दिया और घोषणा की कि इसे बाद में शुरू किया जाएगा और भुगतान चेक के माध्यम से होगा। यह काम प्रभावित इलाकों के घर-घर जाकर त्वरित सर्वेक्षण के बाद होगा। इस कारण जनवरी तक भुगतान रुका रहा। कोई भी सरकारी विभाग जरूरतमंदों और त्रासदी से पैसा कमाना वालों के बीच भेद नहीं करना चाहता था। अन्य कठिन प्रश्न भी थे। जैसे, कौन प्रभावित व्यक्ति था और कौन सा क्षेत्र गंभीर रूप से प्रभावित था? जो लोग मृतक रिश्तेदारों के नाम पर राहत लेना चाहते थे, उनके लिए प्रक्रियाएं बेहद जटिल थीं। इस काम के लिए नियुक्त डिप्टी कलेक्टरों ने दस्तावेजों की मांग की। जब अस्पतालों से संपर्क किया गया, तो डॉक्टर का बर्ताव ठीक नहीं था। वे मृत्यु प्रमाण पत्र मांगने वाले हर व्यक्ति को पैसों के लालची बदमाश के रूप में देखते थे। मेहनतकश और अपने निकटतम रिश्तेदारों को खोने वाले दुखी और गुस्से में थे। इससे भी बदतर था कि उन्हें इधर-उधर भागना पड़ता था। हजारों नामों को देखने में समय लगता था और अस्पतालों में लोग बार-बार आते थे। अपने प्रियजनों को खोने वाले लोग दस्तावेज मांगने से बहुत हैरान थे। उन्हें अपने स्थानीय निगम पार्श्वों के पास जाना पड़ा, जिन्हें मुआवजा दावा प्रपत्रों पर प्रतिहस्ताक्षर करने और आगे की जांच के लिए पुलिस को भेजने के लिए अधिकृत किया गया था। दूध और राशन के मुफ्त वितरण को लेकर सरकार का संचालन भी उतना ही ढुलमुल और उदासीन था।

सरकार ने दिसंबर में घोषणा की थी कि प्रतिदिन 1,000 लीटर मुफ्त दूध दिए जाने के अलावा शहर के प्रभावित क्षेत्रों के सभी परिवारों को दिसंबर के लिए उनके राशन कार्ड पर प्रति यूनिट तीन किलो गेहूं और चावल दिया जाएगा। शहर में विरोध प्रदर्शनों के बाद इसे जनवरी तक बढ़ा दिया गया। शहर के सभी झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वालों के लिए यह प्रति यूनिट 12 किलोग्राम तक बढ़ा दिया गया, क्योंकि दिसंबर में शहर का जनजीवन अस्त व्यस्त हो गया था।

लेकिन सरकार ने लॉजिस्टिक सुनिश्चित करने के लिए कुछ नहीं किया। लगभग 21,000 अस्थायी राशन कार्ड रातों-रात ऐसे निवासियों के लिए बनाने पड़े, जिनके पास कुछ नहीं था। राशन कार्ड बनाने के लिए कोई अतिरिक्त कर्मचारी नियुक्त नहीं किया गया और मौजूदा राशन की दुकानों से अतिरिक्त राशन को वितरित करने की अपेक्षा की गई। इसके परिणामस्वरूप अराजकता की स्थिति पैदा हो गई।

भोपाल त्रासदी ने यह स्पष्ट रूप से दिखा दिया है कि सरकार से ऐसी आपात स्थितियों से किसी भी तरह की दक्षता से निपटने की उम्मीद करना बेमानी है, जिसे अधिक जोखिम वाले औद्योगिकीकरण ने अनिवार्य बना दिया है।

भोपाल : तब से अब तक

भरा नहीं है 40 साल पहले मिला घाव

1969 से 2000

2000 से 2023

1969

यूनियन कार्बाइड इंडिया लिमिटेड (यूसीआईएल) ने कीटनाशक सेविन बनाने के लिए संयंत्र स्थापित किया

1973

सेविन बनाने के लिए मिथाइल आइसोसाइनेट (एमआईसी) अमेरिका से आयात किया गया

30 मार्च, 2005

रसायन और उर्वरक मंत्रालय के तहत विषाक्त अपशिष्ट को हटाने के लिए टास्क फोर्स का गठन किया गया

2005

मध्य प्रदेश (एमपी) उच्च न्यायालय ने नरी को प्री ट्रीटमेंट स्टडी का आदेश दिया

26 अक्टूबर, 2004

सुप्रीम कोर्ट ने कल्याण आयुक्त द्वारा बनाई गई योजना के बाद शेष राशि वितरित करने को मंजूरी दी

19 जुलाई, 2004

सर्वोच्च न्यायालय (एससी) ने कल्याण आयुक्त से पीड़ित समूहों द्वारा दायर याचिकाओं के बाद शेष राशि वितरित करने के लिए कहा

30 जून, 2004

यूओआई ने न्यूयॉर्क न्यायालय के समक्ष अनापत्ति ज्ञापन प्रस्तुत किया

17 मार्च, 2004

यूएस संघीय अपील कोर्ट ने न्यूयॉर्क कोर्ट से कहा कि यदि भारत संघ (यूओआई) राहत पाने के लिए हस्तक्षेप करता है तो वह परिशोधन पर विचार करे

14 अक्टूबर, 2003

नौ अमेरिकी सीनेटरों ने गैस त्रासदी के 2,000 से अधिक पीड़ितों की ओर से द्वितीय सर्किट के लिए अमेरिकी अपील न्यायालय में एक एमिकस ब्रीफ दायर किया। उन्होंने मांग की कि डॉव को इस आपदा के लिए जिम्मेदार ठहराया जाए

अक्टूबर 2005

गुजरात प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड ने अंकलेश्वर में अपशिष्ट को जलाने के लिए अनापत्ति प्रमाण पत्र (एनओसी) दिया

फरवरी 2007

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने 350 टन कचरे को जलाने के लिए अंकलेश्वर भेजने का आदेश दिया

अक्टूबर 2007

विरोध के बाद गुजरात सरकार ने एनओसी वापस ले ली

जनवरी 2009

गुजरात सरकार ने उच्च न्यायालय के आदेश के खिलाफ सर्वोच्च न्यायालय में अपील की, जिस पर सर्वोच्च न्यायालय ने रोक लगा दी

7 जून, 2010

अंतिम फैसले में सीजेएम ने आठ लोगों को दोषी ठहराया

3 दिसंबर, 2010

यूओआई ने गैस पीड़ितों को मुआवजा बढ़ाने के लिए एक वयूरेटिव याचिका दायर की

2006

यूओआई ने न्यूयॉर्क कोर्ट को पत्र लिखकर कहा कि साइट को साफ किया जाना चाहिए, लेकिन कोर्ट चाहता है कि यूओआई सीधे मामले में हस्तक्षेप करे

दिसंबर 2008

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने गुजरात सरकार को आदेश दिया कि वह अपशिष्ट स्वीकार करे या अवमानना का सामना करे

26 अप्रैल, 2010

मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट (सीजेएम) ने आरोप बढ़ाने के लिए बीजीपीएसएस और बीजीपीएमयूएस की याचिका खारिज कर दी

21 जून, 2010

मंत्रियों के समूह ने सफाई अभियान के लिए केंद्र और राज्य के संयुक्त टास्क फोर्स की सिफारिश की

1979

लागत कारकों का हवाला देते हुए यूसीआईएल ने संयंत्र परिसर में एमआईसी का उत्पादन शुरू किया

1980-1982

एमआईसी इकाई के कर्मचारियों की संख्या 12 से घटकर छह हो गई, रखरखाव कर्मचारियों की संख्या छह से घटकर दो रह गई। 26 दिसंबर 1981 को एक प्लांट ऑपरेटर फॉस्जीन गैस रिसाव में मारा गया। जनवरी 1982 में इसी तरह के एक अन्य रिसाव में 28 कर्मचारी गंभीर रूप से घायल हो गए

2-3 दिसंबर, 1984

सुरक्षा और तकनीकी खामियों के कारण टैंक नंबर 610 से एमआईसी लीक हो गई। गैस 20 वर्ग किलोमीटर के दायरे में रहने वाले लोगों को प्रभावित करती है

1985

भारतीय सरकार ने यूएस कोर्ट में यूसीआईएल से 3 बिलियन यूएस डॉलर के मुआवजे के लिए दावा दायर किया

1986

यूसीआईएल यूएस कोर्ट को यह मामला वापस भारतीय न्यायापालिका में भेजने के लिए राजी करने में सफल रहा, जहां मुआवजे की देनदारी बहुत कम है

फरवरी 1989

भारत सरकार और यूसीआईएल ने अदालत के बाहर समझौता कर लिया। मुआवजे की राशि घटाकर 470 मिलियन अमेरिकी डॉलर कर दी गई, जो मूल दावे का सातवां हिस्सा था

अप्रैल 1992

भारतीय अदालत ने वॉरेन एंडरसन को कानूनन भगोड़ा घोषित किया

नवंबर 1994

भारत के सर्वोच्च न्यायालय (एससी) ने यूसीआईएल को अपनी परिसंपत्तियों को बेचने की अनुमति दी, जिससे तकनीकी रूप से भारत में कंपनी की भौतिक उपस्थिति समाप्त हो गई

नवंबर 1999

पीडितों ने यूसीआईएल और उसके पूर्व सीईओ वारेन एंडरसन के खिलाफ न्यूयॉर्क की एक संघीय अदालत में मुकदमा दायर किया। दोनों पर अंतरराष्ट्रीय मानवाधिकार कानून, पर्यावरण कानून और अंतरराष्ट्रीय आपराधिक कानून का उल्लंघन करने का आरोप लगाया गया

फरवरी 2001

यूनियन कार्बाइड कॉर्पोरेशन (यूसीसी) और डॉव केमिकल कंपनी (डीसीसी) का विलय हुआ। डॉव को यूसीसी की संपत्ति और देनदारियां विरासत में मिलीं

21 अक्टूबर, 2002

मध्य प्रदेश ने घोषणा की कि वह सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दायर करेगा ताकि डीसीसी को फैक्ट्री स्थल पर दूषित मिट्टी और भूजल को साफ करने के लिए बाध्य किया जा सके

30 सितंबर, 2002

देहरादून स्थित पीपुल्स साइंस इंस्टीट्यूट द्वारा किए गए एक अध्ययन में भोपाल के पीने के पानी में अत्यधिक विषैले पारे (मर्करी) की मौजूदगी की पुष्टि की गई और स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरों की चेतावनी दी गई है। लोग 18 साल से यह पानी पी रहे थे

28 अगस्त, 2002

भारत सरकार के दबाव के बावजूद भोपाल की एक अदालत में एंडरसन के खिलाफ गैर इरादतन हत्या के आरोपों की पुष्टि हुई। इसमें उसके तत्काल प्रत्यर्पण की मांग की गई

9 जनवरी, 2002

डॉव ने यूसीसी की अमेरिका में देनदारियों को स्वीकार किया और यूसीसी के खिलाफ मूलरूप से दायर टेक्सास एस्वेस्टस मुकदमे का निपटारा किया। लेकिन जोर देकर कहा कि भोपाल में ऐसी कोई देनदारी नहीं है

मार्च 2012

भारत सरकार ने पूर्व यूसीआईएल संयंत्र स्थल पर मौजूद 345 टन विषाक्त अपशिष्ट को इंदौर के निकट एक भस्मीकरण सुविधा में निपटाने की अनुमति मांगने के लिए सुप्रीम कोर्ट में हलफनामा दायर किया

29 सितंबर, 2014

भोपाल गैस त्रासदी के मुख्य आरोपी वॉरेन एंडरसन की मौत

अगस्त 2015

मध्य प्रदेश के धार जिले में पीथमपुर अपशिष्ट उपचार भंडारण और निपटान सुविधा (टीएसडीएफ) में भोपाल संयंत्र स्थल के 10 टन परीक्षण अपशिष्ट को जलाया

2016

न्यूयॉर्क में यूएस कोर्ट ऑफ अपीलस फॉर द सेकंड सर्किट ने जगरनाथ साहू बनाम यूनियन कार्बाइड कॉर्पोरेशन (यूसीसी) मामले में निचली अदालत के फैसले बरकरार रखा, जिसमें कहा गया था कि यूसीसी भोपाल त्रासदी से उत्पन्न किसी भी प्लांट साइट प्रदूषण प्रभाव के लिए उत्तरदायी नहीं है। यह यूएस अदालतों में भोपाल प्लांट से संबंधित हर्जाने की मांग करने वाला आखिरी मामला था। जून 2016 में वादियों ने मई के निर्णय के संबंध में न्यूयॉर्क स्थित न्यायालय में दो याचिकाएं दायर कीं। जुलाई 2016 में न्यूयॉर्क स्थित न्यायालय ने याचिका को खारिज कर दिया। अगस्त 2016 में न्यायालय ने फिर से सुनने के लिए दाखिल वादी की अपील खारिज कर दी और निचली अदालत के फैसले को बरकरार रखती है कि भोपाल त्रासदी से उत्पन्न किसी भी संयंत्र स्थल प्रदूषण प्रभाव के लिए यूसीसी उत्तरदायी नहीं है

2023

जनवरी 2023 : भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने क्यूरेटिव पिटिशन पर तीन दिन (10-12 जनवरी) तक सुनवाई की। अंतिम दिन न्यायालय ने भारत सरकार द्वारा प्रस्तुत स्थानांतरण याचिका को खारिज कर दिया। मार्च 2023 को भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने भारत संघ की उपचारात्मक याचिका को पूरी तरह से खारिज कर दिया, जिसमें 1989 के भोपाल समझौते को फिर से खोलने की मांग की गई थी

आज भी हरे हैं जख्म

भोपाल गैस त्रासदी ने केवल उस समय जीवित लोगों को ही अपनी जद में नहीं लिया, बल्कि गर्भ में पल रहे या दशकों बाद जन्मे लोगों को भी अपना शिकार बनाया। त्रासदी अपने पीछे ऐसे अनगिनत लोगों को छोड़ गई, जिनकी नियति में तड़प थी। भोपाल में आज भी ऐसे लोगों की संख्या कम नहीं है जो केवल दवा के सहारे जिंदा हैं। **राकेश मालवीय** ने ऐसे ही कुछ पीड़ितों का दर्द जाना जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से गैस के दुष्प्रभावों से जिंदा लाश के समान हैं

40 साल में खाई 150 किलो दवाएं

बानो बी, 72 साल

मेरी पैदाइश उत्तर प्रदेश के महोबा जिले की है। घर वालों ने बारह साल की उम्र में मेरा निकाह कर दिया। मेरे शौहर इनायत खान काम की तलाश में भोपाल आए। यहां रेलवे गोदाम में हम्माली करने लगे। एकाध साल बाद मैं भी उनके पीछे यहां आ गई। यहीं जेपी नगर में रहने लगे। तब यह उतना बसा नहीं था। जेपी नगर के ठीक सामने यूनिथन कार्बाइड का कारखाना था। यहां की फिजा बहुत अच्छी थी, भोपाल शहर अपना सा लगने लगा। सोलह साल की उम्र में मैं पहली बार मां बनी। फिर आठ बच्चे हुए।

सब कुछ ठीक चल रहा था कि वह काली रात आई। मेरे घर से पांच लाशें उठीं। शौहर नहीं रहे और चार बच्चे भी चले गए। देवर और भाई को भी खोया। उस रात हम सब खाना खाकर सो गए थे। अचानक खांसी आने लगी। हम उठे। बच्चे भी खांस रहे थे। आंखों में मिर्ची लग रही थी। फिर आंसू आना शुरू हो गए। कमरे में लाइट की रोशनी कम हो गई थी।

सबकी खांसी बढ़ती जा रही थी। हम घबरा गए कि अचानक क्या हुआ। सोचा किसी ने मिर्ची जला दी है। बाहर निकले तो सब ओर इंसान भाग रहे थे। चीखने चिल्लाने की आवाजें आ रही थीं। हम घरों से निकले। नहीं पता चल रहा था कि क्या हुआ। बस हम घरों से भाग गए। हमारे पति, बच्चे सब बिछड़ गए। बाद में पता चला कि हमें जहरीली गैस लग चुकी थी। आंखें सूजी हुई थीं, चेहरा काला पड़ गया था। पेट में भी जलन हो रही थी।

मायके वालों को खबर मिली तो वे भोपाल पहुंचे। शौहर और बच्चों की खोज हुई। बहुत खोजने के बाद पति दूसरे दिन काटजू अस्पताल में मिले। उनको आवाज से हमने पहचाना। उनकी हालत खराब थी। बच्चे हमीदिया स्कूल में भर्ती थे। सभी की हालत खराब थी।

वे हमें बच्चे नहीं दे रहे थे, पूछ रहे थे कि बताओ कौन से कपड़े पहने थे। एक बड़े आदमी के कहने पर बच्चे हमें मिले। पति की हालत दिन ब दिन खराब होती चली गई। एक साल बाद उनका इंतकाल हो गया। फिर एक-एक करके शमीम, सलीम और बबलू भी अल्लाह को प्यारे हो गए। गैस का दंश भुगतने के लिए मैं बची रह गई और आज भी भुगत रही हूं।



पहले मैं तकरीबन 100 किलो की थी। बीमारियों ने ऐसा पकड़ा कि जीना मुश्किल हो गया। गैस लगने के बाद ही महीनों तक बाहर बैठी रही, मेरा पीरियड खराब हो गया। हाथ पैर में दर्द रहने लगी। सिरदर्द और दुनियाभर की बीमारियां लग गईं। बस अस्पताल के चक्कर ही लगाते रहे। डॉक्टर दवाई देते हैं और हर बार नया मर्ज सामने आ आता है। फिर नई जांच होती है। इलाज के लिए संभावना एनजीओ के क्लीनिक में जाने लगे।

मुझे बीते 40 साल में हर दिन औसतन 11 गोлияं खानी पड़ी हैं। मेरे पास डॉक्टरों के ढेरों पर्चे हैं। मैं किस्म-किस्म की आठ से दस गोलियां खाती हूं। अगर 40 साल में दवाओं का हिसाब लगाया जाए तो करीब 150 किलो दवा खा चुकी हूं।

मुझे उच्च रक्तचाप, डायबिटीज टाइप 2, सिरदर्द, जोड़ों का दर्द, चक्कर आना, अनिद्रा और पाचन संबंधी समस्याएं जैसी कई

“डाउन टू अर्थ ने 40 साल तक रोजाना 10 दवा की गोलियों को खाने का हिसाब लगाया तो पता चलता है कि भोपाल गैस त्रासदी के बाद बानो इन चार दशकों में अपने आप को जीवित रखने के लिए करीब 1.5 विंटल दवा खा चुकी हैं। दरअसल एक गोली दवा का भार 0.5 से 5 ग्राम तक हो सकता है। भार दवा के आकार और उसमें प्रयोग किए गए पदार्थ पर निर्भर है। औसतन एक ग्राम की एक दवा मानी जाए और 40 वर्षों तक प्रतिदिन 10 ग्राम दवा का सेवन अगर किया गया है तो यह 1.46 विंटल दवा का उपभोग होगा”

पेशानियों का सामना करना पड़ रहा है। अब तो डॉक्टर ने भी दवाई लिखने से मना कर दिया। लेकिन नौद नहीं आने पर गोलियां लेनी पड़ती थीं। डॉक्टर बोलने लगे हैं और गोलियां खाओगी तो पागल हो जाओगी।

मेरा लड़का है इस्माइल। उसको भी बहुत तकलीफ है। एक दिन काम करता है, चार दिन घर बैठता है। उसकी सांस फूल जाती है। उसके बच्चे की उम्र भी बारह साल हो गई है। गैस कांड का ही असर है कि वह ठीक से समझ नहीं पाता। विकलांगों के स्कूल में जाता है। इसके दिमाग का विकास ही नहीं हुआ।

हमने अपने हकों के लिए बहुत संघर्ष किया। मुआवजा मिला पर पच्चीस हजार से क्या होता है। सरकार ने पेंशन चलाई थी, पर हमें नहीं मिली। जो गैस के बाद तुरंत खत्म हुए थे, उनके ही नाम आए। हमारे शौहर एक साल बाद खत्म हुए थे, हमें केवल विधवा पेंशन मिलती है। पर यह तो सभी विधवाओं को मिलती है, हमें अलग क्या मिला। हमारी किस्मत में आई केवल जहरीली हवा और जहरीला पानी। आज भी कचरा कारखाने के अंदर दबा है। सरकार कुछ नहीं कर पाई उसका।

साफ पानी के लिए हमने खूब लड़ाई लड़ी। दो बार भोपाल से दिल्ली तक पैदल गए। पैदल चलते-चलते हमारी जांघें आपस में टकराकर छिल गईं। एक बार हमें पकड़कर तिहाड़ जेल में डाल दिया गया। तेरह दिन हम अंदर रहे। मनमोहन सिंह की सरकार थी। फिर किसी ने कहा यह अपराधी थोड़े ही हैं आंदोलनकारी हैं, हमें छोड़ा गया, फिर हम बाहर आए। अब जाकर हमें नर्मदा का पानी मिलता है।

हमें तो इसी जहर के साथ जीना है, कब तक जिंगे पता नहीं। पर हर दिन लगता है कि उस एक रात ने हमारी जिंदगी को जहर बना दिया। हम अब तक न्याय की राह देख रही हैं, न्याय केवल पैसों से नहीं मिलता, जिनकी लापरवाही से यह सब हुआ, उनको क्या सजा हुई, आप ही बताइए।

अस्पतालों में कटी जवानी

दिनेश साहू, 41 साल

पिछले बीस साल से मैं अस्पताल के चक्कर लगा-लगाकर पेशान हूं। मेरी तो पूरी जवानी ही अस्पताल में निकल गई। कभी मैं 72 किलो का जवान आदमी था। अब मेरा वजन केवल 42 किलो है। दवा और मशीनों से मेरा खून चूस लिया है।

मैं भोपाल के इतवारा का निवासी हूं। पिता हरेप्रसाद साहू, भोपाल शहर में गल्ले यानी अनाज खरीदने और बेचने का काम करते थे। माता नत्थोबाई गृहिणी थी। पांच भाई और एक बहन थी। गैस कांड वाले साल यानी 1984 के मार्च महीने में ही मेरा का जन्म हुआ। गैस कांड के वक्त मैं केवल छह महीने का था। जैसे-जैसे गैस कांड की उम्र बढ़ती चली गई, मेरी मुश्किलें भी बढ़ती गईं। कोई एक दिन की घटना कैसे किसी आदमी की जिंदगी को प्रभावित कर सकती है, यह मेरी जिंदगी में झांककर समझ सकते हैं।

पुराने भोपाल के लक्ष्मी टॉकीज पर मेरी रेडीमेड कपड़े की दुकान है। मुझे 3 दिसम्बर 1984 की वह भयानक रात याद तो नहीं, लेकिन मेरी मां अक्सर उस काली रात के किस्से सुनाया करती थी। इतवारा पर हम रहते थे। रात में बस आंखों में जलन हुई और सब कुछ तितर-बितर हो गया। गैस कांड का असर मेरे

आवरण कथा

पूरे परिवार पर पड़ा।

जिंदगी गुजर ही रही थी कि 2005 मेरे लिए बड़ी मुसीबत बनकर आया। जिस उम्र में कोई व्यक्ति अपने पूरे जीवन को मजबूत करने की बुनियाद गढ़ता है, उसी वक्त मुझे पता चला कि मेरी किडनी ही खराब है। मुझे भूख लगना बंद हो गई। कई जगह दिखाया। पहले तो इसकी असली वजह ही पता नहीं चल रही थी। भोपाल के प्रसिद्ध डॉक्टर एनपी मिश्रा ने कहा कि किडनी खराब है। इसके बाद डायलिसिस शुरू हुआ। अस्पताल के चक्कर पर चक्कर काटे। प्राइवेट अस्पतालों में पैसा पानी की तरह बह रहा था। एक मध्यमवर्गीय परिवार के लिए यह कमर तोड़ देने वाला था।

मैंने और परिवार वालों ने सोचा कि किडनी ट्रांसप्लांट करवा लेनी चाहिए। यह थोड़ा मुश्किल था। उस वक्त भोपाल में यह सुविधा उपलब्ध भी नहीं थी। फिर इंदौर में पता किया। 2007 में किडनी बदल दी गई। 14-15 लाख रुपए खर्च हुए।

मैं यह समझ नहीं पाता कि हमारे घर में न कोई धूम्रपान करता है न कोई नशा, फिर आखिर यह मुसीबत मेरी सिर आकर कैसे पड़ी। यह भोपाल गैस कांड का असर था या कुछ और। हालांकि मेरे माता-पिता को गैस कांड संबंधी कोई गंभीर बीमारियां नहीं हुईं, पर मैं जब अपने आस-पड़ोस में देखता हूं तो ऐसे कई लोगों को पाता हूं जिन्हें मेरे जैसी ही परेशानियां हैं।

इन्हीं परेशानियों के चलते मैंने अपना घर भी नहीं बसाया। सोचा मेरी अपनी जिंदगी का तो पता नहीं, किसी और की जिंदगी के लिए क्यों मुसीबत बनूं। अकेले ही जिंदगी गुजार रहा हूं।

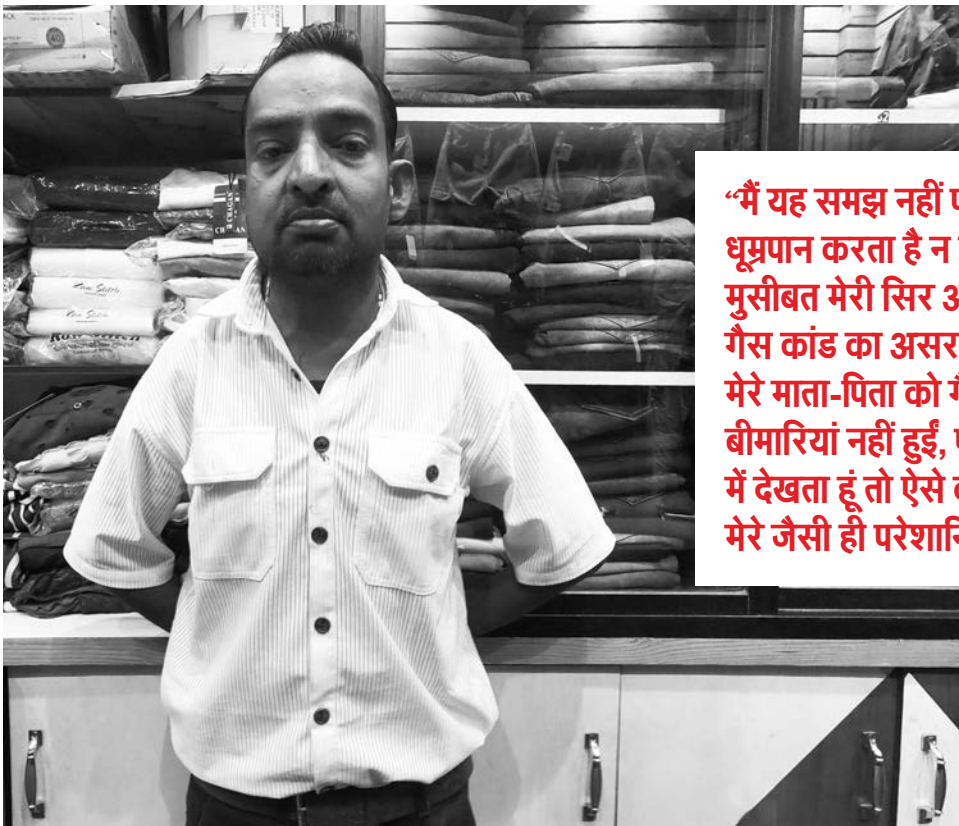
कोविड के बाद एक बार फिर जिंदगी ने टर्न लिया। पता चला कि किडनी ने सपोर्ट करना बंद कर दिया है।

बस तभी से सप्ताह में दो बार डायलिसिस और दवाई शुरू हो गई। मेरे हाथ में कितनी जगह छेद होंगे, आप गिन भी नहीं पाएंगे। यह कोहनी के पास जो गठाने हैं, वह भी इसी प्रक्रिया का फल है। एक बार डायलिसिस होता है तो 100 ग्राम खून तो ऐसे ही चला जाता है, खून धीमे बनता है शरीर में। इसलिए बस शरीर सूख गया है।

वो तो शुक्र है कि भोपाल मेमोरियल में डायलिसिस हो जाता है। खर्चा बच जाता है। फिर भी महीने की पांच हजार की दवाएं तो आती ही हैं। एक दिन में 14 से 15 टेबलेट खाता हूं। मेरा शरीर टेबलेट्स की कृपा से ही बचा है। डॉक्टर दवाओं से ही शरीर को संतुलित रखे हैं। यदि आप मेरी अब तक खाई गई दवाओं को तराजू पर एक साथ रख देंगे तो तीस किलो से कम वजन नहीं आएगा।

एक बार फिर कोशिश है कि किडनी का एक बार और ट्रांसप्लांट हो जाए। एक डोनर भी तैयार है। पर इसकी प्रक्रिया इतनी जटिल है कि इसकी परमिशन लेने में ही लंबा वक्त लग जा रहा है। केवल मैं ही परेशान नहीं हूं, मेरे परिचय में ऐसे और भी लोग हैं जिनके पास डोनर भी हैं, लेकिन वह करवा इसलिए नहीं पा रहे क्योंकि इसकी परमिशन नहीं मिल पा रही है। मरीज वैसे ही परेशान है, यह परमिशन के चक्कर मरीज को और मानसिक मुसीबत में डालते हैं। इस पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

हालांकि फिर से किडनी लगाने में बहुत खर्च आएगा जो मेरे



“मैं यह समझ नहीं पाता कि हमारे घर में न कोई धूम्रपान करता है न कोई नशा, फिर आखिर यह मुसीबत मेरी सिर आकर कैसे पड़ी। यह भोपाल गैस कांड का असर था या कुछ और। हालांकि मेरे माता-पिता को गैस कांड संबंधी कोई गंभीर बीमारियां नहीं हुईं, पर मैं जब अपने आस-पड़ोस में देखता हूं तो ऐसे कई लोगों को पाता हूं जिन्हें मेरे जैसी ही परेशानियां हैं”

“अबु का सब काम लेट हो रहा है। देर से सीख रहे हैं। बोल नहीं पा रहे हैं। और सबसे बड़ी बात तो वह गुस्सा बहुत हो रहे हैं। उसको भोपाल के सभी नामी-गिरामी अस्पतालों में दिखा दिया। होम्योपैथी, आयुर्वेद, अंग्रेजी हर तरह का इलाज करवा लिया। पिछले सात सालों से हम बस उसके लिए अस्पतालों के चक्कर ही लगा रहे हैं”



लिए मुश्किल है, पर करेंगे। सरकार ने एक बार डेढ़ लाख का मुआवजा दिया था। इतने बड़े दर्द के लिए यह क्या होता है? सरकार को चाहिए कि वह गरीब की आगे बढ़कर मदद करे। यह देखे कि गैस कांड का असर कहां-कहां और कैसे हो रहा है। पर गैस कांड अब एक दिन की बरसी बनकर रह गया है। बस यह दौड़ रहा है तो लोगों के शरीर में। मैं इसका जीता-जागता उदाहरण हूँ।

तीन दशक बाद पैदा हुए बच्चे भी विकारों से ग्रस्त

अबु हसन, 8 साल

मेरा नाम सूफिया है। चिंगारी सेंटर मैं पिछले छह महीने से हर रोज इसी उम्मीद से आती हूँ कि मेरा बच्चा ठीक हो जाए। दुनियाभर का इलाज करवा लिया। आठ दस लाख रुपए खर्च हो गए। पर फायदा तो दिखता नहीं। बस यही सोचती हूँ कि अल्लाह ने खिदमत करने का मौका दिया है। एक दिन मेरा बच्चा ठीक हो जाएगा।

मेरा जन्म इतवार में हुआ था। अब्बा मेहनत मजदूरी करते थे। हमें गैस कांड तो याद नहीं है। पर अम्मी अक्सर उस रात के किस्से सुनाया करती थी। उस रात सभी लोगों की खांसते-खांसते हालत खराब हो गई थी। आंखों में मिर्ची लग रही थी। मेरी बहन की आंखें तो सूजकर बहुत बड़ी हो गई थीं। बस इसके बाद परेशानियां ही परेशानियां। घर में मम्मी-पापा को सांस की शिकायत थी। बहुत इलाज करवाया। खुदा का शुक्र है कि मैं उन परेशानियों से बची रही।

रायसेन जिले के ओबेदुल्लागंज में मेरी शादी हो गई। मेरे पति का नाम जनाब मुशरफ रहमान है। वो ट्रक ड्राइवर हैं। आठ साल पहले मेरे घर बेटे का जन्म हुआ। हम बहुत खुश थे। हमने उनका नाम अबु हसन रखा। बहुत एहतियात से उनकी परवरिश कर रहे थे। पहले साल भर में हमें कुछ अंदाजा ही नहीं था कि अबु के

साथ कुछ गड़बड़ है। वह मोटे और लंबे थे। पर जैसे-जैसे वह बड़े हो रहे थे वैसे-वैसे पता चल रहा था कि वह दूसरे सामान्य बच्चों से अलग हैं। डेढ़ साल का होते-होते हमको पता चला कि वह ठीक नहीं हैं।

उनका सब काम लेट हो रहा है। वह देर से सीख रहे हैं। बोल नहीं पा रहे हैं। और सबसे बड़ी बात तो वह गुस्सा बहुत हो रहे हैं। उसको भोपाल के सभी नामी-गिरामी अस्पतालों में दिखा दिया। होम्योपैथी, आयुर्वेद, अंग्रेजी हर तरह का इलाज करवा लिया। पिछले सात सालों से हम बस उसके लिए अस्पतालों के चक्कर ही लगा रहे हैं।

बचपन से ही अबु हसन दवाएं खाते हैं। यदि देखा जाए तो उसने आठ साल की उम्र में चार गोली रोज खाई होगी। यदि एक ग्राम की एक गोली भी मान ली जाए तो अपनी इस छोटी सी उम्र में वह 10 किलो टेबलेट खा गए होंगे। इस दौरान हमारा आठ दस लाख रुपए उनके इलाज पर खर्च हो गया होगा। छह महीने पहले हम उनके इलाज के लिए भोपाल आए। यहीं पर किराये से घर लिया है। पिता और दो छोटी बच्चियां मारिया और हानिया के साथ इतवार में रहते हैं। यहीं चिंगारी पर अबु की फिजियोथैरेपी होती है। रोज बस इस उम्मीद से आते हैं कि एक दिन वह सही हो जाएं।

आप सोचेंगे कि यह गैस कांड का असर है या कोई और। उनकी तो पैदाइश भी यहां की नहीं है। हम भी ऐसा सोचते थे, लेकिन इस सेंटर पर आप दूसरे बच्चों को देखिए आखिर इस इलाके में ही ऐसे बच्चे और इतने ज्यादा क्यों हैं। अबु हसन की नानी को गैस लगी थी। हमें तो गैस लगी भी नहीं। पर अब यह तो बड़े डॉक्टर लोग ही बता सकते हैं कि गैस का असर आखिर इन बच्चों पर कैसे हो रहा है? हम तो इस सेंटर में रोज आते हैं और यहां आकर हमारा मन खराब हो जाता है कि इन बच्चों को यह सजा क्यों मिल रही है।

ट्रेड सीक्रेट का रोड़ा

तेजी से बढ़ता रासायनिक उद्योग जगत अपने व्यापार को गुप्त रखने की हर कोशिश में जुटा है लेकिन पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य की चिंताओं को लेकर बेहद लापरवाह बना हुआ है

विवेक मिश्रा

कोरोनाकाल के दर्मियान (2020-2023) कुल 29 रासायनिक हादसे देश में घटे और इनमें कुल 118 लोगों की मौत हुई और करीब 257 लोग घायल हो गए। नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल (एनजीटी) ने पाया कि यह सभी रासायनिक हादसे रासायनिक संयंत्रों में खराबी, गैर रिसाव, विस्फोट और फैक्ट्री में आग जैसी घटनाओं के कारण घटे। साइटिस्ट्स फॉर पीपल समूह के वैज्ञानिकों ने इन हादसों पर 2021 में जारी रिपोर्ट पर कहा कि यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि भोपाल त्रासदी के 40 वर्षों बाद भी प्रक्रिया सुरक्षा नियमों में अब तक सुधार नहीं हुआ है। रासायनिक हादसे देश के अलग-अलग हिस्सों में जारी है लेकिन सवाल है कि ऐसा क्यों है?

तेजी से बढ़ता हुआ उद्योग जगत लगातार ट्रेड सीक्रेट कानून की मांग कर रहा है। इस ट्रेड सीक्रेट कानून के जरिए कंपनियां अपनी बौद्धिक संपदा की आड़ में अहम जानकारियों को बचाए रख सकती हैं। ट्रेड सीक्रेट कंपनियों को प्रतिस्पर्धा में लाभदायक है लेकिन ऐसी कंपनियां जिनसे पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य को क्षति पहुंच सकती है वह इसे एक हथियार की तरह इस्तेमाल करती हैं। ट्रेड सीक्रेट कानून के अभाव में फिलहाल कंपनियां नॉन डिस्क्लोजर एग्रीमेंट (एनडीए) का इस्तेमाल करते हुए अपने व्यापार की गुप्त संरचनाओं को बताने के लिए बाध्य नहीं हैं। दी वेस्ट बंगाल नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ ज्युडिशियल संसाइसेज के प्रोफेसर डॉ अनिबान मजूमदार ने कहा कि “कंपनियां ट्रेड सीक्रेट (एनडीए) का इस्तेमाल करके अपना बचाव करती हैं और अभी देश में ट्रेड सीक्रेट से निपटने का कोई विशेष कानून नहीं है। सूचना के अधिकार कानून, 2005 में धारा 8 (i) में प्रावधान है कि बौद्धिक संपदा और ट्रेड सीक्रेट से संबंधित जानकारी मांगी जा सकती है अगर वह सार्वजनिक हित में हो। हालांकि, निजी कंपनी के मामले में यह लागू नहीं है।”

मजूमदार भोपाल गैस त्रासदी की मिसाल देते हैं, “यूनियन कार्बाइड कॉर्पोरेशन (यूसीसी) को 2001 में अधिग्रहित करने

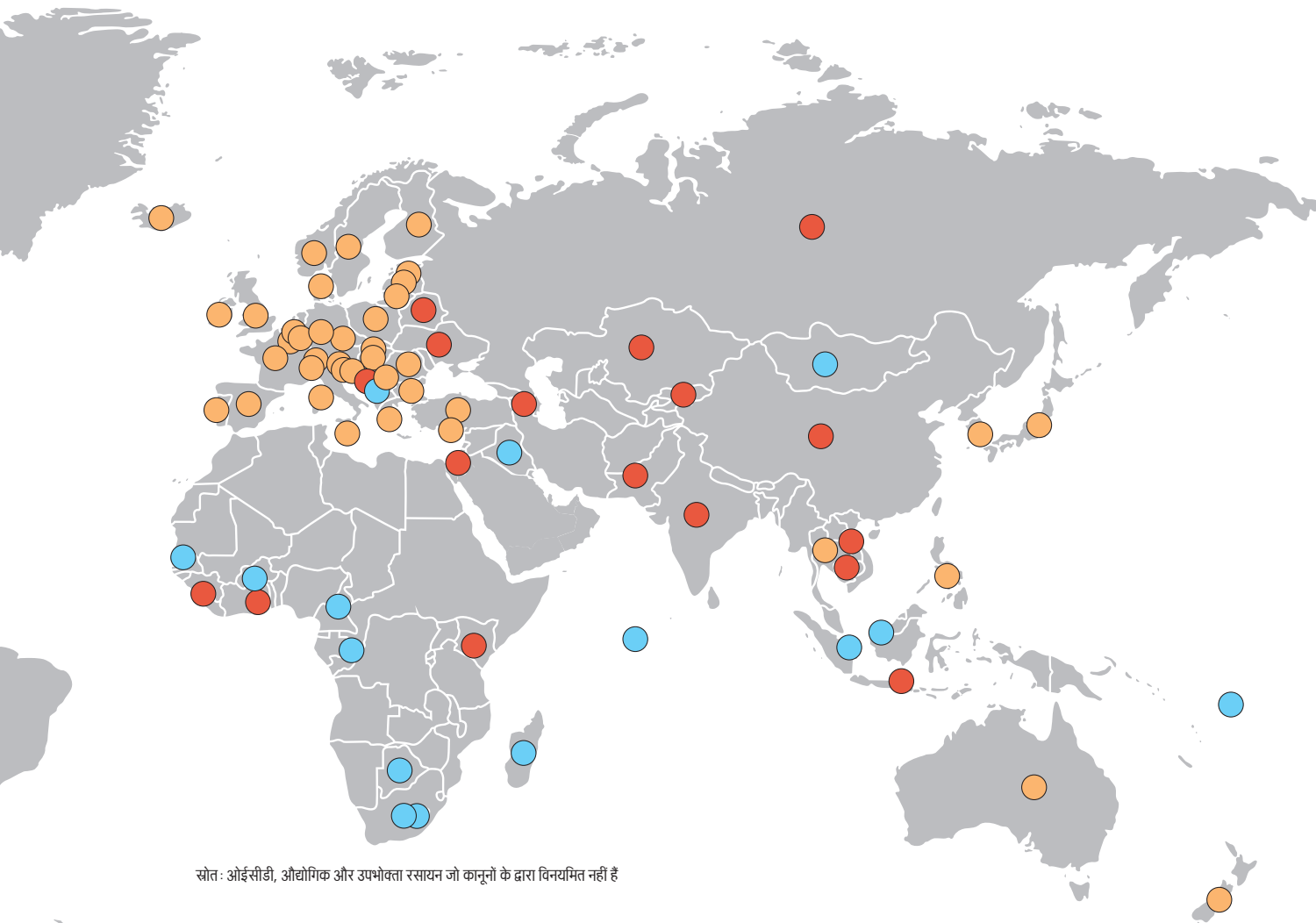
लचर कानून

भारत और एशियाई देशों में रसायनों को विनियमित करने वाले कानून नहीं हैं जबकि इन देशों में रसायनों का अंधाधुंध इस्तेमाल हो रहा

● कानून बन रहा ● कानून है ● कानून नहीं है ● पता नहीं

वाली डाओ केमिकल्स ने रसायन की संरचना का खुलासा करने से इनकार कर दिया था। यदि वह संरचना का खुलासा करती तो त्रासदी के शिकार हुए लोगों का इलाज किया जा सकता था। यूसीसी 1950 से ही ट्रेड सीक्रेट का इस्तेमाल कर रही थी।”

इस मामले में भोपाल गैस त्रासदी इसलिए सबसे बड़ा उदाहरण है क्योंकि अब भी मिथाइल आइसोसाइनेट का इस्तेमाल देश में जारी है और इसे मैनुफैक्चरिंग, स्टोरेज एंड इंपोर्ट ऑफ हजाइर्स केमिकल रूल्स, 1989 के तहत हजाइर्स श्रेणी (अनुसूची 1) में रखा गया है। डाउन टू अर्थ के द्वारा सूचना अधिकार के तहत पूछे गए सवाल कि एमआईसी का कितना और कहां इस्तेमाल किया जा रहा है? इसकी जानकारी डिपार्टमेंट ऑफ केमिकल्स एंड पेट्रोकेमिकल्स ने नहीं दी। मजूमदार कहते हैं, “कुछ रिपोर्ट यह पुष्टि करती हैं कि डाओ केमिकल्स अब भी सिंगापुर स्थित मेगा बीजा नामक कंपनी के माध्यम से भारत में यूनियन कार्बाइड कॉर्पोरेशन के उत्पादों का व्यापार कर रही हैं।” टॉक्सिक वॉच एलाइंस के गोपाल कृष्ण कहते हैं कि देश में कई ऐसे घातक रसायन हैं जिनको न ही हजाइर्स श्रेणी में रखा गया है और न ही उनके बारे में कोई जानकारी उपलब्ध है। वह बताते हैं कि भोपाल में यूसीसी का रिसर्च एंड डेवलपमेंट सेंटर था, जिसमें अमेरिका में प्रतिबंधित गैसों और रसायनों का इस्तेमाल वार वेपन बनाने के लिए किया। हालांकि, जब हादसा हुआ तो इनमें से किस गैस ने त्रासदी मचाई सही से आज तक नहीं जाना जा सका है।



स्रोत : ओईसीडी, औद्योगिक और उपभोक्ता रसायन जो कानूनों के द्वारा विनियमित नहीं हैं

यूसीसी की औद्योगिक इकाई भोपाल में एमआईसी गैस का इंटरमीडिएट रसायन के तौर पर इस्तेमाल कर कार्बारिल सेविन नाम से कीटनाशक तैयार करती थी। इस कीटनाशक को देश में त्रासदी के करीब तीन दशक बाद 8 अगस्त, 2018 से प्रतिबंधित किया गया। यह देरी क्यों की गई, इसकी भी कोई स्पष्ट जानकारी नहीं है। अब भी कई खतरनाक कृषि रसायनों पर प्रतिबंध नहीं लगाया जा सका है। मिसाल के तौर पर मानव और पर्यावरण के लिए खतरनाक सिंथेटिक कीटनाशनक डाइक्लोरोडाइफेनिलट्राइक्लोरोइथेन (डीडीटी) को भारत में पूरी तरह से फेज आउट नहीं किया जा सका है। इसका निर्माण भारत सरकार का उद्यम एचआईएल लिमिटेड के जरिए किया जा रहा है। कंपनी फिलहाल डीडीटी का उत्पादन अफ्रीकी देशों की मांग को पूरा करने के लिए कर रही है। 17वीं, लोकसभा (2023-24) की स्टैंडिंग कमेटी ऑन केमिकल्स एंड फर्टिलाइजर्स रिपोर्ट के मुताबिक, भारत सरकार ने डीडीटी के फेजआउट की योजना दिसंबर, 2024 तक टाल दी है। भारत सरकार ने मई 2002 में स्थायी कार्बनिक प्रदूषकों (पीओपीएस) पर स्टॉकहोम कन्वेंशन पर हस्ताक्षर किए और 13 जनवरी 2006 को इसे अनुमोदित किया था। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम ने “डीडीटी के गैर-पीओपी विकल्पों के विकास और प्रचार” परियोजना की परिकल्पना की थी।

पैन इंडिया की 2022 में अत्यधिक खतरनाक कीटनाशक श्रृंखला पर प्रकाशित रिपोर्ट “स्टेट ऑफ क्लोराइड इन इंडिया” में

कहा कि अत्यधिक विषाक्तता और व्यापक दुरुपयोग के कारण इन रसायनों को तुरंत प्रतिबंधित करने की आवश्यकता है क्योंकि ये मानव स्वास्थ्य, पर्यावरण और अन्य जीवों के लिए गंभीर खतरा पैदा करते हैं।

पर्यावरण मंत्रालय की ओर से 27 नवंबर, 1989 को जारी अधिसूचना खतरनाक रसायनों का निर्माण, भंडारण और आयात नियम, 1989 के तहत देश में मिथाइल आइसोसाइनेट जैसे 684 विषाक्त तमाम रसायनों (हजाइर्स केमिकल) अनसूची एक के तहत दर्ज हैं। इसमें अब भी कई तरह के खतरनाक रसायनों का नाम नहीं है। गोपाल कृष्ण के मुताबिक, यह बहुत ही सीमित सूची है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रतिबंधित रसायनों का इस्तेमाल अब भी भारत में जारी है। एस्बेस्टस इसकी सबसे बड़ी मिसाल है।

इसके अलावा यदि अत्यधिक विषैले और पर्यावरण व मानव स्वास्थ्य पर खतरनाक प्रभाव डालने वाले कृत्रिम रसायन समूह पर-और पॉलीफ्लूरोएल्काइल पदार्थ (पीएफएएस यानी फॉरएवर केमिकल) भी भारत में आंशिक तौर पर ही रेगुलेटेड हैं। यह ऐसे मानव निर्मित रसायन हैं जिनका आम जीवन में प्रभाव और इस्तेमाल बढ़ता जा रहा है। तेल, पानी और चिकनाई से बचाने वाले नॉन स्टिक बर्तन हों या फिर फूड पैकेजिंग कई जगहों पर इनका इस्तेमाल किया जा रहा है। इन रसायनों की संख्या 10 हजार से भी ज्यादा है। यूरोपियन केमिकल्स एजेंसी (ईसीएच) ने इसी साल पीएफएएस को यूरोप में रेगुलेट करने के लिए कदम तेज किए हैं। हालांकि, भारत में इस पर कोई बातचीत नहीं है। औद्योगिक इकाइयां

ऐसे कई रसायनों का इस्तेमाल कर रही हैं, जिनमें हादसे होने की अत्यधिक संभावनाएं हैं। हालांकि, प्राधिकरणों के पास अहम जानकारी तक नहीं हैं। अक्टूबर, 2024 में सूचना के अधिकार के तहत डाउन टू अर्थ ने डिपार्टमेंट ऑफ केमिकल से भोपाल गैस त्रासदी और खतरनाक रसायनों व व्यापारिक रहस्यों के बारे में सवाल पूछा गया तो आरटीआई में दो टूट जवाब आया “सूचना अधिकारी के पास ऐसी कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है।” प्रोटेक्शन ऑफ ट्रेड सीक्रेट बिल, 2024 का मसौदा यदि तय हो जाता है तो कंपनियों को यह और ज्यादा ताकत देगा कि वे अपने खास सूचनाओं और सरंचनाओं को जाहिर न करें। हालांकि, राष्ट्रीय आपातकाल या सार्वजनिक हित जैसे गंभीर मामलों में उन्हें इसकी जानकारी सामने रखनी होगी। मजूमदार कहते हैं कि सवाल यह है कि इस मसौदे में अब तक ऐसा कोई साधन नहीं बताया गया है कि कंपनियां यह जानकारी कहाँ और कैसे रखेंगी।

रासायनिक उत्पादों की संख्या साल-दर-साल बढ़ती जा रही है। केंद्रीय वाणिज्य मंत्रालय के मुताबिक, 2040 तक रासायनिक उद्योग का आकार 1 ट्रिलियन डॉलर तक पहुंचने की उम्मीद है। इसे गति देने के लिए देश में कंपनियों को गुप्त व्यापार में मदद करने वाला प्रोटेक्शन ऑफ ट्रेड सीक्रेट बिल 2024 का मसौदा

रहा। टीएससीए और रीच दोनों को ही उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य और सुरक्षा की रक्षा के लिए डिजाइन किया गया है ताकि मानव स्वास्थ्य या पर्यावरण को नुकसान पहुंचाने वाले पदार्थों के उपयोग को प्रतिबंधित किया जा सके और दोनों का अनुपालन एक तरह ही जरूरी है।

करीब पांच साल पहले 2019 में डाउन टू अर्थ ने ई-मेल के जरिए बातचीत की एक लंबी श्रृंखला में देश के भीतर मिथाइल आइसोसाइनेट (एमआईसी) के उत्पादन और इस्तेमाल को लेकर सरकार से जानकारी मांगी। पूछे गए एक सवाल में जवाब आया “डिपार्टमेंट ऑफ केमिकल के संयुक्त सचिव एमआईसी जैसी विषाक्त गैस की किसी अधिसूचना को लेकर काम कर रहे हैं। आप उनके संपर्क में बने रहिए।” फिलहाल मंत्रालय की ओर से ऐसी कोई अधिसूचना अभी तक नहीं आई है। केमिकल्स (मैनैजमेंट एंड सेफ्टी) रूल्स का मसौदा तैयार है लेकिन इसे अब तक फाइनल नहीं किया गया है।

भारत में 15 से ज्यादा अधिनियम और 19 नियम हैं जो रासायनिक उद्योग के विभिन्न पहलुओं को नियंत्रित करते हैं। फिर भी इनमें से कोई भी अधिनियम विशेष रूप से उद्योग के लिए नहीं बनाया गया है। उदाहरण के लिए, केंद्रीय मोटर वाहन नियम,

भारत दुनिया का छठवां सबसे बड़ा रासायनिक उत्पादक देश बन चुका है। भारत का रासायनिक उद्योग 80 हजार से अधिक व्यावसायिक उत्पाद बनाता है। इसमें बल्क रसायन, विशेष रसायन, कृषि रसायन, पेट्रोकेमिकल्स, पॉलिमर और उर्वरक शामिल हैं। हालांकि, भारत की राष्ट्रीय रसायन नीति 2012 से अब तक लंबित है

तैयार है और इसके उलट देश में रसायनों के प्रबंधन और सुरक्षा के लिए अमेरिका और यूरोप की तरह विषाक्त पदार्थ नियंत्रण अधिनियम 1976 (टीएससीए) और रसायनों का पंजीकरण, मूल्यांकन, प्राधिकरण और प्रतिबंध (रीच) विनियमन जैसा कोई टोस नियम (रूल) अब तक नहीं है। यहां तक कि भारत के पास कोई केमिकल इनवेंट्री और रसायनों के रजिस्ट्रेशन की जरूरत तक नहीं है।

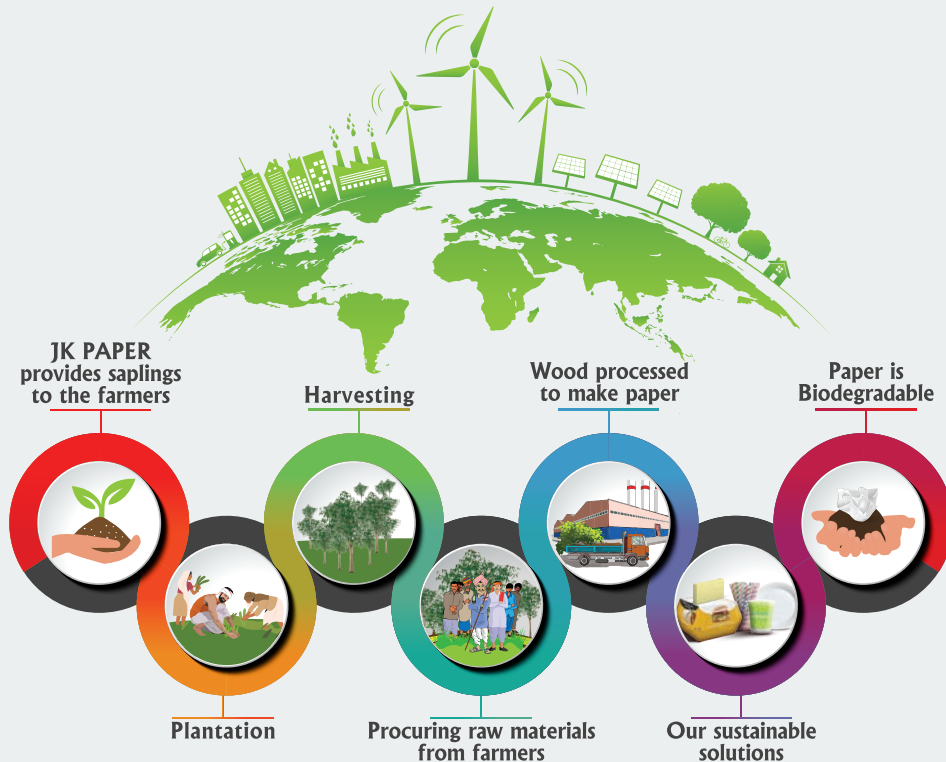
पब्लिक पॉलिसी एंड पब्लिक इंटेरेस्ट कैपेन और पैन इंडिया से जुड़े डॉक्टर नरसिम्हा रेड्डी दोंथी देश में रसायनों की मौजूदा स्थिति पर अपनी टिप्पणी करते हैं, “हमारे पास शस्त्र अधिनियम के बराबर कोई कानून नहीं है। क्योंकि बंदूक रखने के लिए किसी को 7 साल की कठोर कारावास का सामना करना पड़ सकता है, लेकिन खतरनाक रसायनों की एक कैन खरीदने के लिए उसे बरी किया जा सकता है।” वह आगे कहते हैं “दरअसल हमें कानून की जरूरत है, हमें विनियमन की जरूरत है और हमें कानून और विनियमन को लागू करने के लिए संस्थागत तंत्र की जरूरत है।” टॉक्सिक लिंक के पीयूष मोहपात्रा बताते हैं कि ज्यादातर नीतियां उद्योग के बारे में ही चर्चा कर रही हैं। रसायनों के प्रबंधन और उनके खतरे की सूची व श्रेणी को लेकर कुछ खास अभी मौजूद नहीं है। भारत में 1992 के निजीकरण से पहले और भोपाल गैस त्रासदी के बाद काफी सख्ती थी। लेकिन निवेश के लिए उद्योगों को ढील देने की शुरुआत हुई और अंतरराष्ट्रीय कानूनों में साझेदारी के बाद भी अमल नहीं हो

1989, सामान्य रूप से सड़क परिवहन के सभी पहलुओं से निपटता है और रसायनों सहित खतरनाक सामानों के परिवहन को भी विशेष रूप से संबोधित करता है। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी) द्वारा 2005-06 में जारी की गई भारत के लिए राष्ट्रीय रासायनिक प्रबंधन प्रोफाइल रिपोर्ट में बताया गया है कि पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 वर्तमान में रासायनिक उद्योग के लिए एक बड़े छाते की तरह काम करता है। साथ ही, राष्ट्रीय रासायनिक नीति 2012 से लंबित है। सीपीसीबी के पूर्व वैज्ञानिक और दिल्ली स्थित थिंक टैंक सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरमेंट से जुड़े डीडी बसु कहते हैं, “हमें एक व्यापक कानून की आवश्यकता है जो रासायनिक उपयोग, उत्पादन और सुरक्षा को नियंत्रित करे।”

दुनियाभर में रसायनों को प्रतिबंधित करने और विनियमित करने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं। हालांकि, भारत अब भी इस मामले में फिसल रहा है। डॉ. दोंथी कहते हैं कि “हमें वास्तव में एक ऐसे रसायन विनियामक ढांचे और तंत्र की जरूरत है जो न केवल गुप्त व्यापार से निपटने के लिए काफी हो बल्कि आपूर्ति श्रृंखला सौदों को उजागर करने के लिए भी हो क्योंकि उद्योग व्यापार के हर चरण में अपने उत्तरदायित्व से बचते हैं। उन्होंने कहा “कंपनियों ने अपने सौदों की खरीददारी और बिक्री के लिए जो चेन बनाई है वह इस हिसाब से बनाई है कि नियामकों के द्वारा उनकी जांच न हो सके। हमने देखा है कि किस तरह से आम लोगों को जहर बांटा गया है।”



JK PAPER'S COMMITMENT TO ENVIRONMENTAL STEWARDSHIP



WE PLANT **220 SAPLINGS** EVERY MINUTE AND OVER **3,19,000 SAPLINGS** EVERY DAY FOR NURTURING THE ENVIRONMENT

For long, the paper industry has been tainted as one of the causes of deforestation, but we are here to change the narrative. At JK Paper, we are committed to care for the environment. We do not destroy natural forest trees to make our paper, instead leverage on Agro/Social Farm Forestry.

Our Agro/Social Farm Forestry, started in year 1991, relies on growing and harvesting unique varieties of trees (Subabul, Casuarina & Eucalyptus). Through our diligent R&D efforts, these special varieties of trees helped farmers get 2-3 times higher yields compared to traditional seed route plantations.

In FY 24, JK Paper distributed over 11.64 Crores saplings to farmers, which are harvested to produce paper. Since inception, JK paper has planted 9.50 lakhs acres of land under its Agro Social Farm Forestry Program. This program has not only positively impacted the environment, but also yielded livelihood opportunities for over 1,00,000 + lakhs farmer families. You can help us turn things around by choosing sustainable paper solutions and pave a path for a better tomorrow.

We are a Carbon Positive Company

“प्रौद्योगिक नाकामी व हरित क्रांति की विफलता का संकेत बना भोपाल”

कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, इरविन के मानवविज्ञान विभाग में प्रोफेसर और विभागाध्यक्ष **किम फॉर्चून** ने 2001 में प्रकाशित अपनी किताब “एडवोकेसी आफ्टर भोपाल: एनवायरमेंटलिज्म, डिजास्टर, न्यू ग्लोबल ऑर्डर्स” में आपदा के बाद के परिणामों के बारे में बताया है। यह पुस्तक 1984 में गैस रिसाव के वर्षों बाद 90 के दशक की शुरुआत में भोपाल में हुई घटनाओं का ब्योरा देती है। **रोहिणी कृष्णमूर्ति** ने फॉर्चून से भारत में उनके अनुभवों और इस आपदा द्वारा भारत में पर्यावरणवाद को आकार दिए जाने के बारे में बातचीत की है



आपने भोपाल गैस त्रासदी के कुछ साल बाद 1990 और 1992 के बीच भारत में जमीनी स्तर पर कार्य किया। भोपाल में जनता का मूड क्या था?

शुरुआती तौर में मैं तमिलनाडु में शोध करने के मकसद से भारत गई थी और तब मेरी सोच थी कि भोपाल त्रासदी मेरे काम का मुख्य फोकस न होकर पृष्ठभूमि में रहेगी। लेकिन जब मैंने मामले के मूल निपटारे (सुप्रीम कोर्ट ने फरवरी 1989 में भोपाल के सभी मुकदमों के अंतिम निपटारे का निर्देश दिया था, जो 47 करोड़ डॉलर की राशि के बराबर था) के तुरंत बाद भोपाल का दौरा किया तो वहां आक्रोश और डर का माहौल था। उस समय गैस पीड़ितों को अंतरिम राहत राशि तक नहीं मिल पा रही थी।

वो बहुत तात्कालिक और दुखद समय था। अपने शोध के दौरान मुझे एहसास हुआ कि मैं अंग्रेजी भाषा में लेखन में मदद करके आंदोलन की सेवा कर सकती हूं, क्योंकि अदालत की सारी कार्यवाही अंग्रेजी में होती थी। मैंने भोपाल ग्रुप फॉर इंफॉर्मेशन एंड एक्शन, महिला संगठन (भोपाल गैस पीड़ित महिला उद्योग संगठन या भोपाल गैस प्रभावित कामकाजी महिला संघ) और आपदा के बारे में अपना खुद का ब्योरा लिखने वाले यूनिथन कार्बाइड इंडिया लिमिटेड के एक बहुत ही मुखर कार्यकर्ता, दोनों के साथ काम किया। मैंने उनकी लेखनी का अंग्रेजी अनुवाद करने में मदद की। उन्होंने मुझे तकनीकी ब्योरे के साथ वास्तव में वहां घटित घटनाओं को समझने का गुर सिखाया। उस समय भोपाल में तमाम तरह के काम हो रहे थे। एक काम, पीड़ितों को अंतरिम राहत का भुगतान दिलाने पर चल रहा था, जो बेहद जरूरी था। संयुक्त राज्य अमेरिका में मामले को सुनवाई के लिए अब भी कुछ प्रयास किए जा रहे थे।

भोपाल में जमीनी स्तर के आंदोलन ने भारत में पर्यावरणवाद को कैसे आकार दिया ?

उस समय भारत में जमीनी स्तर पर पर्यावरणवाद में तेजी आई थी, जिसने असल में पर्यावरणवाद के पुराने स्वरूप से मुकाबला किया, जो बाघों को बचाने जैसे संरक्षणवादी उपायों पर केंद्रित था। उस वक्त कृषि आंदोलन, महिला आंदोलन जैसे विभिन्न प्रकार के जन आंदोलनों ने सिर उठा लिया। देश भर में लोगों को एक साथ लाने वाली अनेक बैठकें हुईं और तब यह भावना थी कि इसका जमीनी स्तर से आना जरूरी है। नब्बे के दशक की शुरुआत में भारत में जमीनी स्तर के संगठन प्रभावशाली रूप से मजबूत थे और उन संरचनात्मक समस्याओं को अच्छी तरह से समझते थे, जो न केवल भोपाल बल्कि देश भर में अन्य पर्यावरणीय नुकसान पैदा करती हैं। ऐसे कई उच्च शिक्षित लोग थे जो ग्रामीण इलाकों

में या असंगठित समुदायों के साथ काम करने के लिए पहुंच गए थे। संगठनों में बहुत अधिक क्षमता और आपस में विचारों का बड़े पैमाने पर आदान-प्रदान हो रहा था। प्रौद्योगिकी सभी के लिए समृद्धि लाएगी, इस विचार पर अत्यधिक विश्वास करने के लिए भारतीय राज्यसत्ता की जबरदस्त आलोचना हो रही थी। अफसरशाही की भी गहरी आलोचना की गई, जो कुछ मायनों में थोड़ी विडंबनापूर्ण थी क्योंकि और अधिक लोकतंत्र से भोपाल त्रासदी को रोकने में मदद ही मिलती लेकिन ऐसा नहीं हुआ। पिछले कई वर्षों से भोपाल आपदा के बारे में अपने शिक्षण में मैंने जिन चीजों पर जोर देने की कोशिश की है उनमें से एक यह है कि हमने इस प्रकार की आपदाओं को रोकने के लिए आवश्यक क्षमता निर्माण नहीं देखा है। भोपाल न केवल प्रौद्योगिकी के नाकाम वादे का एक बहुत नाटकीय प्रतीक बन गया, बल्कि इसे हरित क्रांति की विफलता के संकेत के रूप में भी देखा गया क्योंकि यह कीटनाशकों का निर्माण कर रहा था। और चूंकि भोपाल कांड पर सालाना श्रद्धांजलि समारोह होते थे, इसलिए इसमें देश भर से लोग आते थे। इस प्रकार भोपाल ऐसा स्थान बन गया जहां लोग साथ आकर कल्पना करने लगे कि आम जनमानस का पर्यावरणवाद कैसा होगा।

इसके अलावा पश्चिम के साथ क्या करना है, आधुनिकता के साथ क्या करना है, इस पर भी काम चल रहा था। स्थानीय लोगों के लिए ये घटना बहुराष्ट्रीय निगम की गहरी विफलता थी जिसने वास्तव में उन उम्मीदों को धराशायी कर दिया कि विदेश से आई वस्तुएं अपने साथ तमाम अच्छी चीजें लेकर आती हैं और आप उन पर भरोसा कर सकते हैं। मुझे लगता है कि कामगार उस कंपनी से बहुत निराश थे जिस पर उन्होंने भरोसा किया था।

क्या आपको लगता है कि नौकरशाही, त्रासदी रोक पाने के लिए आवश्यक जांच और संतुलन बिठा पाने में नाकाम रही और क्या यह आपदा के बाद भी असफल रही?

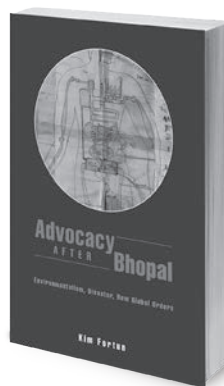
मुझे लगता है कि यूनियन कार्बाइड भोपाल परिसर जैसी सुविधाओं की निगरानी करना नौकरशाही का एक मजबूत कार्य होगा। लेकिन तब ऐसा नहीं किया गया। आज भी ये नहीं किया गया है। भारत में हमारे पास अब भी बहुत कम संख्या में ऐसे निरीक्षक हैं जो अत्यधिक जोखिम वाले औद्योगिक परिसरों का दौरा और जांच कर रहे हैं। वास्तव में अमेरिका में भी यह चिंताजनक है। उनसे कई चीजें छूट जाती हैं। हमने ऐसी घटनाएं देखी हैं जहां हमें बाद में प्हेसास हुआ कि उद्योग किसी दिए गए रसायन का अपने रिकॉर्ड से कहीं अधिक भंडारण कर रहा है। अग्निशमन विभाग को नहीं पता कि वे क्या भंडारित कर रहे हैं और इसलिए यह जोखिम पैदा करता है क्योंकि कंपनियों की कोई निगरानी नहीं है। आने वाले वर्षों में अमेरिका में इसके और भी बदतर होने की आशंका है।

आपदा के बाद और भोपाल की तरह जब एक बार चीजें तात्कालिकता की अवधि से आगे बढ़ जाती हैं तब नौकरशाही का ध्यान भटक जाता है। भोपाल में आप इसे त्रासदी स्थल की साफ-सफाई कर पाने में नाकामी के रूप में देख सकते हैं। मुझे लगता है कि मुआवजे के संदर्भ में योजना ने केवल व्यक्तिगत भुगतान प्रदान किया और जीवित समुदायों के लिए संरचनात्मक स्थितियों में वास्तव में कोई सुधार हो पाया।

भोपाल गैस त्रासदी से कैसे निपटा जाना चाहिए था?

सबसे बुनियादी बात यह है कि आपदा होनी ही नहीं चाहिए थी। हमें निरीक्षण की ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए थी जो इसे रोक पाती। मुझे भोपाल त्रासदी को तकनीकी रूप से बेहतर ढंग से समझने का मौका मिला है और मेरे लिए यह बहुत स्पष्ट है कि इसे रोका जा सकता था। इस दायरे में संयंत्र के मूल डिजाइन (जो कि अमेरिका में हुआ था) से लेकर भारत में श्रमिकों के प्रशिक्षण तक की बात शामिल है। आपदा की रात संयंत्र में अनेक सुरक्षा प्रणालियां काम ही नहीं

कर रही थीं। ऐसी चेतावनी के साथ ऑडिट रिपोर्ट अमेरिका भेजी गई थी कि हालात ठीक नहीं हैं। यूनियन कार्बाइड के एक बहुत ही मुखर कामगार ने मुझे बताया कि संयंत्र की संरचना को लेकर भी यूनियन कार्बाइड के इंजीनियरों ने तर्क दिया था कि उन्हें घनी आबादी वाले इलाके के बीचोंबीच इतने बड़े टैंक में ऐसे खतरनाक रसायन का भंडारण नहीं करना चाहिए। उनके पास छोटे पात्रों में भंडारण का विकल्प था। त्रासदी के बाद न्याय मिलना कठिन होता है। पीड़ितों को अंतरिम राहत भुगतान हासिल होने में आठ साल लग गए और प्राप्त हुई धनराशि ऊंट के मुंह में ज़ीरे के समान थी। लोगों को लगातार यह चिंता सताती रही कि वे गैस पीड़ित के रूप में अपनी वस्तु-स्थिति साबित नहीं कर पाएंगे। उनमें से कई पक्की दीवारों वाले घरों में नहीं रहते थे। उन्हें यह साबित करना था कि गैस रिसाव की रात वे कहां रह रहे थे। लोग उस कागजी कार्यवाही की सत्यता को लेकर चिंतित थे। मुआवजा अदालतों के भोपाल आने पर पीड़ितों को न्यायाधीशों के सामने खड़े होकर मुआवजे के अपने अधिकार का बचाव करना पड़ा। इस व्यवस्था ने पीड़ितों पर सबूत और औचित्य का बहुत अधिक बोझ डाल दिया, जिन्हें निश्चित रूप से ऐसी हालातों का सामना नहीं करने देना चाहिए था।



एडवोकेसी आफ्टर भोपाल: एनवायरमेंटलिज्म, डिजास्टर, न्यू ग्लोबल ऑर्डर्स

लेखक: किम फॉरिस

प्रकाशक: यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस

मूल्य: 3,530 रुपये

जब मैं भोपाल में थी तब वे पीड़ितों की देखभाल के लिए अस्पताल का निर्माण शुरू ही कर रहे थे। शुरुआती दौर से ही ये धारणा बन गई थी कि वास्तव में वह अस्पताल आपदा से सबसे अधिक प्रभावित लोगों की सेवा के लिए बनाया ही नहीं गया था। अस्पताल दूर था और इसका ज्यादा ध्यान संभ्रत लोगों पर था। मैं सचमुच नहीं जानती कि उस अस्पताल ने कुछ दशकों में क्या किया है। मेरा मानना है कि आपदा से उबरने के लिए विद्यालयों समेत सामुदायिक बुनियादी ढांचे के निर्माण और एक ऐसी पीढ़ी को तैयार करने की आवश्यकता है जो अनजाने में औद्योगिक जोखिम की चपेट में न आए। मेरा मानना है कि वास्तविक तैयारी का मतलब सार्वजनिक शिक्षा की ठोस व्यवस्था है। भोपाल में न्याय का एक अन्य पहलू निश्चित रूप से उस परिसर की साफ-सफाई और फैक्ट्री स्थल पर बिखरे कचरे के नतीजतन होने वाला जल प्रदूषण रहा होगा।

क्या आपको लगता है कि अब तक घटित हो चुकी ज्यादातर औद्योगिक त्रासदियों को रोका जा सकता था?

मेरा मानना है कि पेट्रोकेमिकल्स स्वाभाविक रूप से खतरनाक हैं। ऐसे परिसरों के निकट रहने वाले निवासियों के साथ-साथ कामगारों के लिए भी पेट्रोकेमिकल्स के रोजमर्रा के जोखिम और धीमे खतरे रहते हैं। मुझे लगता है कि औद्योगिक सुविधाएं बेहतर ढंग से चलाई जा सकती हैं। उन कंपनियों की पहचान करना अहम है जो बेहतर काम करती हैं और अपनी साइटों पर जोखिम कम करने में पूरी तत्परता से सक्रिय हैं। इस कड़ी में हम बड़े टैंक भंडारण की

बजाए छोटे टैंक भंडारण के उपयोग की मिसाल ले सकते हैं।

दक्षिणी कैलिफोर्निया में जहां मैं रहती हूं, उसके नजदीक दो रिफाइनरियां हैं जो अब भी शोधन प्रक्रिया में हाइड्रोफ्लोरिक एसिड का उपयोग करती हैं। अगर ये रसायन बाहर निकल जाए तो यह विनाशकारी साबित होगा। दुनिया भर की अधिकांश रिफाइनरियां अब हाइड्रोफ्लोरिक एसिड का उपयोग नहीं करती हैं। सरकारों को कंपनियों को जवाबदेह बनाते हुए यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वे सबसे सुरक्षित विकल्पों का उपयोग करें।

भोपाल त्रासदी से हुए नुकसान को समझने में विज्ञान की कितनी भूमिका रही और तब से टॉक्सिकोलॉजिकल रिसर्च कितना विकसित हुआ है?

उस समय और ऐतिहासिक रूप से पर्यावरण विज्ञान बहुत रूढ़िवादी रहा है क्योंकि वैज्ञानिक यह नहीं कह सकते कि एक्स के चलते वाई का परिणाम सामने आता है। नुकसान अधिक असमान रूप से होता है। भोपाल के बारे में दिलचस्प और चिंताजनक बात यह है कि इस बात पर कोई प्रश्नचिह्न नहीं है कि आपदा ने लोगों को नुकसान पहुंचाया। भोपाल में त्रासदी के तुरंत बाद के हालात पर सवाल नहीं उठाया जा सका। विपदा के तत्काल बाद नुकसान को समझने के लिए विज्ञान की आवश्यकता इतनी महत्वपूर्ण नहीं थी क्योंकि वो

आपकी किताब में वकीलों, पत्रकारों और पर्यावरण कार्यकर्ताओं द्वारा भोपाल गैस कांड को अलग-अलग तरीके से पढ़े जाने के बारे में भी बात की गई है।

व्या आप इसे विस्तार से बता सकती हैं?

लोगों द्वारा समस्याओं की पहचान कर उन्हें चिन्हित किए जाने और उनके निपटारे के लिए क्या किया जाना चाहिए इसको लेकर उनकी सोच के बीच भिन्नता है। उनमें से कुछ मतभेद निहित स्वार्थों के कारण हैं जो समस्या का अस्तित्व ही न होने का दिखावा करना चाहते हैं। हालांकि अन्य प्रकार के अंतर भी हैं। यदि आप चिकित्सा जगत के किसी पेशेवर से मुख्य समस्या और भावी प्राथमिकता क्रियाओं के बारे में पूछते हैं, तो उनके पास कानूनी पेशेवर या इंजीनियर या पास में रहने वाले सामुदायिक व्यक्ति की तुलना में एक अलग दृष्टिकोण होगा। समस्या की समग्र समझ के लिए विभिन्न दृष्टिकोणों और ज्ञान स्वरूपों के साथ काम करने की कला सीखना बेहद महत्वपूर्ण है। मुझे लगता है कि अक्सर ये अविश्वास में तब्दील हो जाता है क्योंकि यहां एक भावना काम करती है जो मतभेद को हमारी समझ को बढ़ाने में मददगार मानने की बजाए एक समस्या मान लेती है। भोपाल त्रासदी के बाद जो महत्वपूर्ण घटना हुई है वह यह है कि पर्यावरणीय खतरों और पर्यावरणीय नुकसान को समझने में सामुदायिक ज्ञान को बेशकीमती माना जाने लगा है।

यूनियन कार्बाइड ने नैतिक जिम्मेदारी लेने का वादा किया था। जमीन पर ये निश्चित रूप से दिखाई नहीं दे रहा था। वह कॉरपोरेट सोशल रिस्पॉन्सिबिलिटी का शुरुआती दौर भी था। जैसे ही यह स्पष्ट हो गया कि ये उद्योग कितने जोखिम भरे हैं, उन्होंने सुरक्षित और सामाजिक रूप से जिम्मेदार होने की छवि बनाने के लिए अपने निवेश में बढ़ोतरी कर दी

मंजर बेहद नाटकीय था। हालांकि, नुकसान की सीमा का आकलन करने में ये जरूर सामने आया और यही मुकदमेबाजी की असल वजह थी। गैस रिसाव से बचे लोगों और वकीलों ने तर्क दिया है कि भारतीय राज्यसत्ता ने नाटकीय रूप से नुकसान की सीमा को कम करके आंका है। पर्यावरणीय स्वास्थ्य विज्ञान में अनुसंधान का अविश्वसनीय रूप से फलना-फूलना, 1990 के दशक के बाद घटित घटनाओं में से एक है। हम तब की तुलना में आज बहुत अधिक जानकारी रखते हैं। ऐसा नहीं है कि तब हमें ये मालूम नहीं था कि उस समय के कई रसायन खतरनाक थे। यह बहुत ही गंभीर है कि गर्भावस्था के दौरान रासायनिक संपर्क बच्चों के स्वास्थ्य पर कुप्रभाव डाल सकता है। वायु प्रदूषण सिर्फ आपके फेफड़ों को ही प्रभावित नहीं करता, यह अल्जाइमर रोग और मधुमेह से भी जुड़ता है। प्रदूषण लोगों पर क्या असर डालता है, इसकी समझ नाटकीय रूप से बढ़ी है।

हालांकि, मुझे लगता है कि विनियमन में उस विज्ञान का उपयोग करने की हमारी क्षमता बहुत अधिक सीमित है। इनमें से कुछ या बहुत कुछ राजनीतिक इच्छाशक्ति और नियामक प्रक्रिया पर उद्योग का असाधारण प्रभाव है। नियामक विज्ञान को विशेष प्रयोगशालाओं में तैयार किए जाने की आवश्यकता है। उद्योग जगत, नियामक निर्णय लेने में अकादमिक अध्ययनों का बहुत अधिक उपयोग करने के खिलाफ दबाव प्रक्रिया का इस्तेमाल करता है। हमें शासन में विज्ञान को शामिल करने का एक बेहतर तरीका खोजना होगा। यहां तक कि सबसे अच्छी स्थितियों में भी, जहां आपके सामने कोई राजनीतिक विरोध ना हो, यह चुनौतीपूर्ण है। हमें विष विज्ञान (टॉक्सिकोलॉजी), महामारी विज्ञान और आणविक रसायन विज्ञान पर अध्ययन जारी रखने के लिए सिर्फ कोष उपलब्ध कराते रहना होगा। एक बार विज्ञान सामने आने पर हमें इसका उपयोग करने में सक्षम होना पड़ेगा। जाहिर है, ये रास्ता अभी खुला नहीं है।

यूनियन कार्बाइड ने आपदा की नैतिक जिम्मेदारी ली और उन्होंने संदेश दिया कि भारत में ताकतें एक लंबी कानूनी और राजनीतिक लड़ाई लड़ने को लेकर ज्यादा उत्सुक थीं, जिससे पीड़ितों को कोई फायदा नहीं हुआ। क्या ऐसे संदेशों ने उनके पक्ष में काम किया?

हां और न, दोनों। दरअसल, ये इस बात पर निर्भर करता है कि आप सवाल किससे करते हैं। निश्चित रूप से उद्योग और रासायनिक उद्योगों के व्यापार समूह यूनियन कार्बाइड के पीछे लामबंद हुए। आपदा के बाद के वर्षों में भी यूनियन कार्बाइड के सीईओ को तत्कालीन अमेरिकन केमिकल मैनुफैक्चरर्स एसोसिएशन का अध्यक्ष बनाया गया था। अब इसका नाम बदल दिया गया है। उस वक्त पूरे उद्योग की ताकत और सुरक्षा का बचाव करने की भावना काम कर रही थी। दूसरी ओर, अकादमिक इंजीनियरों और औद्योगिक इंजीनियरों ने यूनियन कार्बाइड के इस दावे को कभी स्वीकार नहीं किया कि किसी असंतुष्ट कामगार द्वारा भंडारण टैंक में पानी डाल दिए जाने से रासायनिक प्रतिक्रिया शुरू हुई और नतीजतन गैस का रिसाव हुआ। मुझे याद है कि मैंने एक अकादमिक सम्मेलन की रिपोर्ट पढ़ी थी जिसमें यूनियन कार्बाइड ने ये किस्सा बयां करने की कोशिश की थी, लेकिन कोई इस पर विश्वास नहीं कर रहा था। इस त्रासदी के चलते कंपनी के कुछ कर्मचारियों को अपने नियोक्ताओं के बारे में बेहद शर्मिंदगी महसूस होने लगी थी। हालांकि आपको यह भी याद रखना चाहिए कि उन्होंने नैतिक जिम्मेदारी लेने का वादा किया था। जमीन पर ये निश्चित रूप से दिखाई नहीं दे रहा था। याद रखें कि यह कॉरपोरेट सोशल रिस्पॉन्सिबिलिटी में तेजी का शुरुआती दौर भी था। जैसे ही यह स्पष्ट हो गया कि ये उद्योग कितने जोखिम भरे हैं, उन्होंने सुरक्षित और सामाजिक रूप से जिम्मेदार होने की छवि बनाने के लिए अपने निवेश में बढ़ोतरी कर दी।

वाह रे वारेन

“मैंने एक गरीब देश के कुछ एक हजार लोगों को गैस से मार भी दिया, कुछ लाख लोगों को अपाहिज कर भी दिया तो कौन सी आफत आ गई?”

सोरित गुजो



सोरित / सीएसई

चारों ओर घुप्प अंधेरा था। लोगों की चीख-पुकार की आवाजें आ रहीं थीं। इन्हीं में से होती हुई दो परछाईं चलती चली जा रहीं थीं। एक परछाईं बोली, “गोयबल्स! यह कौन सी जगह है? यह कौन लोग हैं जो भूतों की तरह चल रहे हैं?”

दूसरी बोली, “हिटलर जी इस जगह को नरक कहते हैं। जो भूतों की तरह चल रहे हैं वो लोग भूत हैं और यह आवाजें उन पापी लोगों की हैं जिनको खोलते गर्म तेल की कड़ाही में पकौड़े की तरह तला जा रहा है... पर आप डरो मत। हमारा-आपका नाम एनआरसी यानी “नरक रजिस्टर ऑफ सिटिजन” में नहीं है... सुना है हमारी व्यवस्था हेल में की गई है।”

पहली परछाईं बोली, “हेल में क्यों?”

इनकी बातचीत चल ही रही थी कि अचानक उनके बगल से तेज रफ्तार की खुली छत वाली एक चमचमाती रोलसरोयस गाड़ी निकल गई। उसमें कोई गोरा यूरोपियन बैठा हुआ था।

पहली परछाईं बोली, “देख रहे हो बिनोद! इन यूरोपीय गोरों के मजे हैं... जरूर इसको हेवेन में जगह मिली होगी... अरे याद आया गोयबल्स! गोरों तो हम भी हैं और यूरोपीय भी! फिर उसे हेवेन मिला और हमें हेल! भला वह क्यों?”

तभी वह चमचमाती रोलसरोयस गाड़ी वापस आकर उनके पास रुकी। उसमें बैठे यूरोपीय ने कहा, “इसकी वजह यह है प्यारे हिटलर कि तुम बेवकूफ हो। मुझे वारेन एंडरसन कहते हैं। मैं एक मल्टीनेशनल कंपनी यूनियन कार्बाइड का सीईओ था। मेरी यूनियन कार्बाइड कंपनी की जहरीली गैस से हजारों लोग मर गए, लाखों जिंदगी भर के लिए अपाहिज हो गए पर मुझे हेवेन मिला।”

पहली परछाईं बोली, “देख रहे हो बिनोद! गैस से हमने लोगों को मारा और दुनिया हम पर थू-थू करती है... हमें जान बचाकर भागने का मौका नहीं मिला और अपने ही घर के बंकर में मुझे खुद पर गोली चलानी पड़ी... वैसे वारेन भाई एक बात बताओ कि तुम भागे कैसे?”

वारेन एंडरसन ने कहा, “बड़ा मजेदार किस्सा है। हुआ यह कि ज्यादा से ज्यादा मुनाफा बटोरने की चाहत में हम यूरोपीय लोग कभी भी थर्ड वर्ल्ड कंट्री के अपने कारखानों में सुरक्षा पर ध्यान नहीं देते। भोपाल में भी यही था। ऐसे में दुर्घटना तो होनी ही थी और हुई भी। मुझसे एक गलती हो गई कि भोपाल में गैस दुर्घटना के कुछ दिन बाद मैं भोपाल पहुंचा और लप्प से गिरफ्तार कर लिया गया... पर मैं घंटे भर में छूट भी गया!”

“छूट भी गए का क्या मतलब!” इतनी देर से चुपचाप खड़े गोयबल्स ने पूछा, “ऐसे कैसे छूट गए?”

“अब यह तो आप तत्कालीन जिलाधीश, तत्कालीन थानेदार, तत्कालीन मुख्यमंत्री, परधान-मंत्री, चीफ सेक्रेटरी इत्यादि से पूछो। उनमें से कई इसी नरक में घूमते-टहलते मिल जाएंगे... मुझे केवल इतना पता है कि मैं प्लेन में बैठा और अमेरिका वापस आ गया!”

पहली परछाईं बोली, “सब वक्त-वक्त की बात है।”

हिटलर को टोकते हुए वारेन एंडरसन बोला, “जी नहीं फ्यूहेरर जी! यह वक्त-वक्त की बात नहीं बल्कि नागरिक-नागरिक की बात है। गैस से तुमने भी लोगों को मारा और मैंने भी, पर दोनों एक बात नहीं है। मैंने एक गरीब देश के कुछ एक हजार लोगों को गैस से मार भी दिया, कुछ लाख लोगों को अपाहिज कर भी दिया तो कौन सी आफत आ गई? गरीब भारतीय लोगों के जान की कीमत ही क्या है? उतनी कीमत तो “आर्थिक तरक्की” और “फॉरेन डायरेक्ट इन्वेस्टमेंट” के लिए तो चुकानी ही पड़ेगी। अब इसके लिए किसी वारेन एंडरसन को सजा दोगे? अरे भाई! इससे दुनिया में संदेश जाएगा कि इंडिया में बिजनेस के अनुकूल वातावरण नहीं है। मैंने जो भी किया भारत की तरक्की को ध्यान में रखकर किया, इसीलिए आज मैं हेवेन के मजे ले रहा हूं।”

इतना कहकर वारेन एंडरसन तेजी से अपनी चमचमाती गाड़ी लेकर फुर्र हो गया। हिटलर बोला, “वाह रे वारेन! तुम तो मेरे भी गुरु निकले!”

शजर की कदर

बांदा के मृतप्राय सदियों पुराने शजर लघु उद्योग में एक जिला एक उत्पाद योजना ने काफी हद तक जान फूंक दी है

भागीरथ, बांदा, उत्तर प्रदेश

बांदा के शजर हस्तकला उद्योग से जुड़े 58 साल के द्वारिका प्रसाद सोनी उन गिने-चुने कारोबारियों में शामिल हैं, जिन्होंने अपने पुरतैनी व्यवसाय को आंखों के सामने दम तोड़ते देखा है। लेकिन पिछले 6-7 साल उनके लिए राहत भरे रहे हैं। उन्हें लगता है कि यह मृतप्राय लघु उद्योग अब फिर से जिंदा होने की राह पर है। शजर पत्थर से ताजमहल, इंडिया गेट और राम मंदिर की प्रतिकृति बनाने वाले और 2011 में राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित द्वारिका प्रसाद सोनी इसका श्रेय एक जिला एक उत्पाद (ओडीओपी) योजना को देते हैं। सोनी के अनुसार, साल 2000 से यह उद्योग लगभग पूरी तरह खत्म हो गया था। 2017 तक जिले में केवल 30-35 कारीगर ही इस व्यवसाय से जुड़े थे। लेकिन 2017 में शजर हस्तकला को ओडीओपी में शामिल करने के बाद इस उद्योग से करीब 250 लोग और 15-20 कारोबारी जुड़ गए हैं।

राज्य सरकार की इस योजना ने शजर कारोबारियों को आर्थिक संबल प्रदान किया और उन्हें 50 लाख रुपए तक के लोन पर 25 प्रतिशत की सब्सिडी मिलने लगी है। इससे कई कारोबारी जो उद्योग से मुंह मोड़ चुके थे, वापस इस व्यवसाय से जुड़ने लगे। सोनी ने भी इस योजना के तहत 2019-20 में जिले में सबसे पहले 25 लाख रुपए का लोन लिया था और इस रकम की मदद से उन्होंने अपने कारखाने के लिए कुछ मशीनें खरीदीं थीं।

इस सरकारी प्रोत्साहन के बाद सोनी का टर्नओवर 2019 में 25 लाख रुपए से बढ़कर 2022-23 में डेढ़ से दो करोड़ रुपए तक पहुंच गया। साथ ही उनकी उत्पादन क्षमता भी 5,000





पीस से बढ़कर 25,000 पीस तक पहुंच गई है। सोनी अपने तीन कारखानों में तैयार होने वाले शजर उत्पादों को जयपुर, दिल्ली और मुंबई में व्यापारियों को बेचते हैं, जहां से यह विदेशों में जाता है। वर्तमान में उनके तीन कारखानों में 12-13 कर्मचारियों का स्टाफ है। 2017 से पहले केवल तीन लोग ही उनके कारखानों में काम करते थे।

सोनी के बाद 14 और लोगों ने योजना के तहत लोन लिया। लोन लेने वालों में 7 पुरानी इकाइयों के संचालक थे जबकि 8 नई इकाइयां थीं। ऐसी ही एक नई इकाई शेख अब्बासुद्दीन ने भी 2021-22 में 25 लाख रुपए का लोन लेकर शुरू की है। लोन के बाद उन्होंने अपना राजस्व 30 लाख रुपए से बढ़ाकर

वाली प्रदर्शनियों में शजर हस्तकला को देशभर में दिखाने का नियमित मौका मिलने लगा।

हालांकि बांदा के अलीगंज में करीब 25 साल से शजर का कारखाना चला रही गीता अग्रवाल मानती हैं कि ऐसी प्रदर्शनियों में माल नहीं बिकता क्योंकि इसमें आने वाले अधिकांश लोगों को इस पत्थर की खूबियां और इतिहास की जानकारी ही नहीं होती। गीता के कारखाने में 10-12 लोग काम करते हैं और उसमें तराशा गया शजर अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी आदि देशों में निर्यात होता है।

उपायुक्त उद्योग गुरुदेव रावत डाउन टू अर्थ को बताते हैं कि ओडीओपी के बाद विभाग चाह रहा है कि इसे ज्यादा से ज्यादा लोग समझें। अभी इससे



2017 में शजर हस्तकला लघु उद्योग को ओडीओपी में शामिल करने के बाद इस उद्योग से करीब 250 लोग और 15-20 कारोबारी जुड़ गए हैं। बांदा के अलीगंज में चल रही एक औद्योगिक इकाई में शजर की सधाई करते कारीगर। यहां तराशा गया शजर कई यूरोपीय और अरब देशों में भेजा जाता है

50 लाख रुपए कर लिया है। अब्बासुद्दीन के पिता की आभूषणों की दुकान है। वह बताते हैं कि शजर पत्थर स्वतंत्र रूप से नहीं बिकता। इसे मुख्यतः आभूषणों में जड़कर बेचा जाता है।

ओडीओपी के बाद मार्च 2023 में शजर हस्तकला को अपनी विशिष्टता के लिए मिले भौगोलिक संकेतक (जीआई) ने भी इस लघु उद्योग को पहचान दिलाई। जीआई टैग के लिए 2019 में “केन हस्तशिल्प उत्थान समिति फिल्ट्रेशन” के जरिए आवेदन करने वाले द्वारिका प्रसाद सोनी कहते हैं कि जीआई टैग मिलने से भारत सरकार द्वारा लगाई जाने

जुड़े लोग केवल बांदा शहर में ही सीमित हैं। अगर आसपास के गांव के लोग इससे जुड़ेंगे तो इसका प्रचार-प्रसार होगा। विभाग इसे प्रोत्साहित करने के लिए हर साल प्रशिक्षण देता है। इसमें शामिल होने वाले लोगों को प्रतिदिन 200 रुपए का मानदेय दिया जाता है। उन्हें पत्थर की घिसाई और कटाई के लिए एक टूलकिट भी मिलती है।

शजर के सबसे पुराने शिल्पकारों में शामिल और 1983 में राजकीय पुरस्कार विजेता सतीश चंद्र भट्ट मानते हैं कि सरकारी मदद से इस लघु उद्योग को काफी फायदा मिला है और कई नए लोग इससे

शजर इस प्रकार के सामान्य से दिखने वाले पत्थर के अंदर छिपा होता है। शजर के कारोबार से जुड़े कारीगर और उद्यमी ही उसकी पहचान कर सकते हैं। कारोबारियों की शिकायत है कि यह पत्थर काफी महंगा हो गया है, जिससे उनकी लागत बढ़ गई है



जुड़े हैं। हालांकि वह यह भी मानते हैं कि जब तक सरकारी मदद मिलती रहेगी, यह कला जिंदा रहेगी।

क्या है शजर

शजर पत्थर को वैज्ञानिक भाषा में डेंड्राइट एगोट के नाम से जाना जाता है। यह क्वार्ट्ज परिवार का पत्थर है। मोस स्केल पर इसकी कठोरता करीब 7 होती है जो नीलम के समकक्ष है। मान्यता है कि इस पत्थर को पहनने से ताकत और शांति मिलती है और ईश्वर प्रसन्न रहता है। मुस्लिम समुदाय में इसे बेहद पाक माना गया है।

स्थानीय लोगों में यह भी मान्यता है कि पूर्णिमा की रात में पत्थर पर जिसकी भी छाया पड़ती है वह उसमें दर्ज हो जाती है। बांदा के वरिष्ठ पत्रकार और साहित्यिक पत्रिका मुक्त चक्र के संपादक गोपाल गोयल कहते हैं कि एक फोटोजेनिक पत्थर है। वह बताते हैं कि एक बार भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू बांदा आए थे। पूर्णिमा की रोशनी में वह केन नदी के पास खड़े थे, तभी उनकी छाया एक शजर पर पड़ी और वह उसमें दर्ज हो गई। वह बताते हैं कि नेहरू की आकृति वाला वह शजर पत्थर बहुत महंगा बिका था।

हालांकि सतीश चंद्र भट्ट ऐसी किसी मान्यता पर यकीन नहीं करते। वह कहते हैं कि इसकी उत्पत्ति की दो थ्योरी है। एक थ्योरी यह है कि वॉलकैनिक युग में जब लावा निकल रहा था, तब एगोट, आयरन और मैग्नीज भी निकला। एगोट असल में सिलिका ऑक्साइड है। यह बाहर आकर ऑक्सीसाइड होकर ठोस बन गया। वह बताते हैं कि इसका मेल्टिंग प्वाइंट है 2,600 डिग्री सेल्सियस है

जबकि बाकी खनिजों का मेल्टिंग प्वाइंट 1,100 से 1,600 डिग्री सेल्सियस के बीच है। सिलिका जब सॉलिड हुई तब मिनिरल तरल अवस्था में थे। ये मिनिरल सिलिका की दो परतों के बीच दब गए और पैटर्न के रूप में फैल गए।

भट्ट के अनुसार, दूसरी थ्योरी यह है कि जब सिलिका की दो परतें एक-दूसरे जुड़ीं तो उनके बीच कुछ जगह खाली रह गईं। पिघला हुआ मिनिरल उस खाली जगह में जमा हो गया और दबाव पड़ने पर उसने पैटर्न बना दिया। वह मानते हैं कि ऐसा नहीं है कि शजर में केवल पैटर्न ही निकलते हैं। इसमें धब्बे भी निकलते हैं। ये घटनाएं उस वक्त ही हैं जब धरती पर जीवन नहीं था। उस समय पृथ्वी आग का गोला थी।

जर्नल ऑफ लैंग्वेज एंड लिटरेचर में 2022 में प्रकाशित उमाशंकर यादव, रविंद्र त्रिपाठी, ज्ञान प्रकाश यादव और मानो आशीष त्रिपाठी ने अपने अध्ययन “शजर स्टोन (हकीक) : इंडियन शजर हेरिटेज इज इन डिक्लाइन स्टेज” में लिखा है, “शजर पर हम जो पैटर्न देखते हैं, वो फंगस (शैवाल) के फंसे हुए जीवाश्मों के अलावा और कुछ नहीं हैं। शजर पत्थर के दो या अधिक टुकड़ों के बीच फंसा फंगस एसिड या बेस पैदा करता है। यह एसिड या बेस पत्थरों को पारदर्शी बनाता है और अकार्बनिक गोंद के रूप में कार्य करता है और अलग-अलग पत्थरों को चिपका देता है। पत्थरों के अंदर फंसे फंगस के जीवाश्म पत्तियों या पेड़ों के पैटर्न की तरह दिखते हैं और पत्थर की सुंदरता को बढ़ाते हैं।”

सोनी के अनुसार, यह बांदा से गुजरने वाली केन नदी में पाया जाता है। हालांकि कुछ लोगों का



मानना है कि अब यह पत्थर केन में मिलना बंद हो गया है और बांदा में जिस शजर पत्थर की आपूर्ति होती है वह नर्मदा नदी से लाया जाता है। लेकिन इसमें कोई विवाद नहीं है कि इसे तराशने का काम बांदा में ही होता है। भारत के अलावा यह ब्राजील, चीन, ऑस्ट्रेलिया, कजाकिस्तान, मेडागास्कर, मैक्सिको, मंगोलिया, नामीबिया, उरुग्वे और अमेरिका में भी पाया जाता है। दिखने में यह आम पत्थर जैसा होता है, लेकिन जब इसके जानकारों



द्वारा जब इसे तराशा जाता है तो उसके अंदर पेड़-पौधे, पत्तियों, चिड़ियों, मानवों आदि की खूबसूरत आकृतियाँ निकलती हैं, जिन्हें शजर कहते हैं। बांदा में पारंपरिक रूप से इसे तराशने का काम किया जाता है। केन नदी के आसपास रहने वाले लोगों खासकर मल्लाह समुदाय को इसकी पहचान होती है। बरसात या बाढ़ के बाद जब नदी में ज्यादा पानी आ जाता है, तब इस पत्थर को खोजा जाता है और फिर से बांदा में इसे तराशने के काम में लगे



बांदा में शजर के बड़े व्यापारी द्वारिका प्रसाद सोनी की आभूषणों की दुकान पर शजर फुटकर और आभूषणों में जड़कर बेचा जाता है (बीच में और दाएं)। द्वारिका बांदा में शजर के बड़े शिल्पकार हैं जिन्हें राष्ट्रपति और राज्य सरकार द्वारा इस कला को प्रोत्साहित करने में उनके योगदान के लिए पुरस्कृत किया जा चुका है। शजर को जीआई टैग दिलाने में भी उनकी अहम भूमिका रही है

व्यापारियों तक पहुंचाया जाता है। शजर कारोबारी गीता अग्रवाल कच्चा पत्थर औसतन 400-500 रुपए किलो के भाव पर खरीदती हैं। जबकि द्वारिका प्रसाद सोनी कहते हैं कि कच्चे पत्थर की गुणवत्ता देखकर ही उसका भाव तय होता है। यह भाव 1,000-5,000 रुपए प्रति किलो तक हो सकता है।

फैक्ट्रियों में पहुंचने पर सबसे पहले पत्थर की कटाई होती है। इस प्रक्रिया में अधिकांश पत्थर बेकार हो जाते हैं क्योंकि शजर न मिलने पर उनका कोई उपयोग नहीं होता। आमतौर पर शजर केवल 5 प्रतिशत पत्थर में ही निकलता है। द्वारिका प्रसाद सोनी कहते हैं कि एक क्विंटल कच्चे माल में मुश्किल से 2-6 पत्थर में ही शजर होता है। कई बार तो पूरी खेप में कोई शजर नहीं मिलता।

पत्थर की कटाई के दौरान जिस पत्थर में शजर की शिनाख्त होती है, उसे छोट लिया जाता है। फिर उसे सधाई के लिए आगे बढ़ाया जाता है। इस प्रक्रिया में शजर को आकार दिया जाता है। इसके बाद इसे चिकना करने वाले कारीगर के पास भेजा जाता है और अंततः पॉलिश होकर यह अंतिम उत्पाद के रूप में सामने आता है। यह अंतिम उत्पाद मुख्य रूप से आभूषणों में लगकर उसे आकर्षक बनाता है।

पुराना इतिहास

चेन्नई स्थित जियोग्राफिकल इंडिकेशन रजिस्ट्री कार्यालय को उपलब्ध कराए गए दस्तावेजों के अनुसार, बांदा पिछले 300-400 वर्षों से शजर हस्तशिल्प का केंद्र है। करीब 400 साल पहले एक अरब ने इसे खोजा था। इसमें छपी आकृतियों से वह इतना प्रभावित हुआ कि उसने इसका नाम शजर

रख दिया। अरबी में इसका अर्थ पेड़ या झाड़ होता है। मुगलकाल में इस कला को स्थानीय राजाओं व नवाबों ने काफी प्रोत्साहित किया। बांदा के नवाब जुल्फिकार अली खान बहादुर पत्थर की कटाई करने वाले अब्दुल्ला के काम के इतने मुरीद हुए कि वह उसे महाराष्ट्र से बांदा ले आए। अब्दुल्ला ने बांदा के स्थानीय लोगों से शजर की जानकारी ली। इसके बाद वह शजर को तराशने के काम में लग गए। 1911 में शजर कला का प्रदर्शन महारानी विक्टोरिया के दरबार में किया गया था। उस वक्त शजर हस्तशिल्पी और अब्दुल्ला के बेटे अब्दुल गफ्फार महारानी विक्टोरिया के राजतिलक में पहुंचे थे और अपनी कला का प्रदर्शन किया था। 1993 तक अब्दुल्ला की 10-11 पीढ़ियां इस पुश्तैनी काम को करती रहीं। इस काम में उनकी महारथ को देखते हुए उन्हें उस्ताद कहा जाता था।

दस्तावेजों के मुताबिक, 1920-21 में इस काम में 30 परिवार और करीब 250 कारीगर लगे थे लेकिन स्वतंत्रता के बाद यह कला क्षीण होने लगी और 1970 तक लगभग खत्म होने के कगार पर पहुंच गई। 1973-74 में में ईरान एक कारोबारी के बांदा आने के बाद इस काम ने फिर जोर पकड़ लिया। 1970-80 के दशक में विदेशों में इसकी मांग बढ़ने पर कई कारोबारियों ने इस उद्योग को अपना लिया। सतीश चंद्र भट्ट कहते हैं कि उन्होंने खुद 1970 के दशक में ईरान के कारोबारियों को सीधा शजर बेचा था। वह यह भी बताते हैं कि शजर का काम एक नशे की तरह है। इसे एक बार शुरू करने के बाद कारोबारी नुकसान उठाते हुए भी उसे जारी रखता है।

कटे हुए पत्थर में शजर दिखाते द्वारिका प्रसाद सोनी। उनके कुल तीन कारखाने हैं जहां शजर तलाशने का काम किया जाता है। वह बांदा में एक जिला एक उत्पाद के बाद लोन लेने वाले पहले कारोबारी हैं। इस लोन की मदद से उन्होंने अपने कारखानों के लिए कुछ मशीनें खरीदीं (दाएं)। बांदा के एक कारखाने में पत्थर में शजर दिखाता एक कारीगर (नीचे)



दिक्कतें भी हैं

सरकारी प्रोत्साहन के बावजूद शजर के शिल्पियों के सामने कई दिक्कतें हैं। सबसे बड़ी समस्या कच्चे माल की महंगाई है। भट्ट के मुताबिक, कच्चा माल 2,500 रुपए प्रति किलो के आसपास मिलता है। वह बताते हैं कि सरकारी मदद मिलने के बाद शजर के ज्यादातर

कारीगर कारखानेदार हो गए हैं और अधिकांश व्यापार उनके हाथ में आ गया है। उन्होंने बिना यह सोचे समझे कि शजर कितने में बिकेगा, कच्चा माल ऊंचे भाव पर खरीदना शुरू कर दिया। इससे कच्चे माल का भाव 100 गुणा तक बढ़ गया है।

एक समस्या यह है कि इस कला और उद्योग

के कद्रदान बहुत सीमित मात्रा में हैं। खुद स्थानीय लोग इससे अनजान हैं। भट्ट कहते हैं कि इसके बड़े व्यापारी जयपुर, दिल्ली और मुंबई में हैं। ये बड़े व्यापारी ही शजर के कारोबार को नियंत्रित करते हैं और भाव भी वही तय करते हैं। उनके मुताबिक, बांदा के स्थानीय व्यापारियों के लिए व्यापार लाइसेंस लेना बेहद कठिन है।

गीता अग्रवाल मानती हैं कि एक तो कच्चा माल महंगा है और कभी-कभी उसमें एक भी शजर नहीं निकलता। इससे पूरा माल और पैसे बर्बाद हो जाते हैं। वह शजर कारोबार की बेहतरी के लिए स्थानीय बाजार को बढ़ावा देने पर जोर देती हैं।

इसके अलावा बड़े पैमाने पर केन नदी में वैध और अवैध खनन ने शजर की उपलब्धता बुरी तरह प्रभावित की है। द्वारिका प्रसाद सोनी मानते हैं कि खनन के कारण बालू के साथ शजर भी चला जाता है। वह कहते हैं कि बारिश के 4-5 महीने में उन्हें 10-15 क्विंटल कच्चा माल ही प्राप्त होता है।

उनका सुझाव है कि शजर हस्तशिल्प को प्रोत्साहित करने के लिए सरकार को दो काम प्राथमिकता के आधार पर करने चाहिए। पहला, जिले में एक कॉमन फैसिलिटी सेंटर की स्थापना और दूसरा एक शजर बैंक खोला जाए। इससे शजर को पहचान और व्यापार को बढ़ावा देने में मदद भी मिलेगी।

**AAETI**

RESIDENTIAL TRAINING ON LAND ACQUISITION, REHABILITATION AND RESETTLEMENT

COURSE DATE: February 11-14, 2025

COURSE VENUE: Anil Agarwal Environment Training Institute (AAETI), Neemli, Alwar, Rajasthan

As the country is progressing towards development, the arising need for more land is inevitable and so are the conflicts with the displacement of people. In order to minimize these conflicts, it is prudent to provide the inhabitants fair information on the impacts of the projects and the compensation against the acquisition of their lands. It is where Social Impact Assessment plays a crucial role.

Social Impact Assessment (SIA) is the process of analyzing, monitoring and managing the social and cultural consequences of projects. It is an important tool to inform decision makers, regulators and stakeholders about the possible social and economic impacts of a development project. In order to be effective, SIA requires active involvement of all concerned stakeholders. Further, an understanding of RFLARR Act, 2013 and its provisions in terms of rehabilitation and resettlement is crucial to provide necessary compensation to the affected people.

With an objective to enhance the capacity of the stakeholders in this domain, Centre for Science and Environment is conducting a four-day residential training programme which focusses on the complete process of SIA and R&R including baseline data collection, land acquisition survey, preparation of the resettlement action plan (RAP), Asset evaluation etc. The programme aims to build a cadre of trained professional who are well versed in SIA reporting and land acquisition matters. .

WHO CAN ATTEND?

• SIA practitioners and consultants • Government officials from state revenue department, municipality, district collector, mining etc • Development corporations and industries • Academicians, students, researchers • Civil society groups, NGOs, advocates • Anyone else interested in the subject

LEARNINGS FROM PROGRAMME:

The participants will develop a complete understanding of

- **SIA methodology:** Tools and instruments for conducting a SIA study
- **Baseline data information:** Learn data need, data collection, collation and interpretation
- **Act and Policies:** Learn provisions of the Right to Fair Compensation and Transparency in Land Acquisition, Rehabilitation and Resettlement Act-2013, issues and challenges in land acquisition, and how to prepare land acquisition plan
- **Public consultation:** Learn identification of affected people, modes of engagement and stages at which it is required.
- **Rehabilitation and resettlement plan:** Learn how to do asset evaluation, prepare entitlement matrix and develop R&R plan.
- **Reporting methodologies:** Learn how to develop a SIA report

COURSE FEES: ₹ 28,000

(includes training fees, accommodation, food and travel from/to Delhi and training centre)

For relevant government officials, the course fee is sponsored by CSE.

Note: Participants have to reach CSE's Delhi office on February 10 latest by 1 pm. Transport to the campus will be arranged from the CSE's office.

FOR ANY QUERIES, PLEASE CONTACT

Ishita Garg, Training coordinator, Email: ishita.garg@cseindia.org | Mobile: +91-9899676011

महिला आविष्कारकों का कड़वा सच

महिला वैज्ञानिक अपनी जीवन बदलने वाली खोजों के लिए तो सुखियों में रही हैं, लेकिन आविष्कारों में वे काफी पीछे हैं

लता जिष्णु

भौतिक वैज्ञानिक रोहिणी गोडबोले के निधन ने इस बात पर विचार करने के लिए प्रेरित किया कि महिला वैज्ञानिक यहां और विश्व स्तर पर कितनी भूमिका निभाती हैं। वह एक पार्टिकल फिजिसिस्ट थीं और विज्ञान के क्षेत्र में महिलाओं की एक उत्साही समर्थक थीं। गोडबोले बेंगलुरु में इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ साइंस में सेंटर फॉर हाई एनर्जी फिजिक्स में प्रोफेसर थीं। वह उन दुर्लभ महिलाओं में से एक थीं, जिन्होंने आम तौर पर पसंद की जाने वाली प्रयोगात्मक भौतिकी के उलट सैद्धांतिक भौतिकी को चुना। चूंकि उन्होंने सैद्धांतिक उच्च ऊर्जा भौतिकी में विशेषज्ञता हासिल की, इसलिए उन्हें विज्ञान की दुनिया में जगह बनाना कठिन था। यह दुनिया भर में एक आम बात है, चाहे महिलाओं ने किसी भी क्षेत्र को चुना हो। उन्हें अपने विचारों और शोध के जुनून को आगे बढ़ाने के लिए भारी बाधाओं और चुनौतियों से लड़ना पड़ा।



एक उदाहरण है बायोकेमिस्ट काटलिन करिको का भी है, जिन्हें कोविड-19 महामारी के खिलाफ दुनिया की रक्षा करने वाली महिला के रूप में सराहा गया है। कोरोना महामारी नोबेल कोरोनावायरस सार्स-सीओवी-2 के कारण हुई थी। इम्यूनोलॉजिस्ट ड्र्यू वेइसमैन के साथ उन्होंने खोज की कि कैसे मेसेंजर राइबोन्यूक्लिक एसिड (एमआरएनए) को शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को ट्रिगर किए बिना कोशिकाओं में प्रवेश करने में सक्षम बनाया जाए। उनके महत्वपूर्ण शोध ने एमआरएनए टीकों की नींव रखी जिसने कोविड-19 महामारी से लड़ने में मदद की। उनका संघर्ष एक क्लासिक संघर्ष था। फंड और संस्थागत समर्थन से वंचित करिको हमेशा एक वरिष्ठ वैज्ञानिक पर निर्भर थीं। वह एक रिसर्च असिस्टेंट के तौर पर सीमित थीं और उन्हें एक प्रोफेसर के रूप में कठोर अनिश्चितताओं का सामना करना पड़ा। उन्हें और प्रोफेसर वेइसमैन को फिजियोलॉजी या मेडिसिन में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किए जाने से दो साल पहले वह कॉलम लिखा गया था।

ऐसा लगता है कि शानदार और असाधारण मैरी क्यूरी के दिनों से बहुत कुछ नहीं बदला है, जिन्होंने एक सदी से अधिक पहले करिको की तुलना में जबरदस्त बाधाओं के बावजूद अत्याधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान में अपनी अमिट छाप छोड़ी थी। क्यूरी को 1911 में दूसरे नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था।

वह दो-दो नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाली एकमात्र महिला और दो अलग-अलग विज्ञान-केमिस्ट्री और फिजिक्स में यह पुरस्कार अर्जित करने वाली एकमात्र वैज्ञानिक थीं। क्यूरी पोलैंड की रहने वाली थीं और फ्रांस में शोध करती थीं। करिको हंगरी की रहने वाली हैं और अपने मूल देश में सेजर्ड यूनिवर्सिटी में पढ़ाने गईं। लेकिन यह वास्तव में मुद्दा नहीं है। क्यूरी को तो अपने पति फ्रेंचमैन पियरे की मौत के बाद अपने घर पर भीड़ के हमले का भी सामना करना पड़ा था जो उन्हें फ्रांस से निष्कासित करने की मांग कर रही थी। क्यूरी को 1903 में पियरे के साथ केमिस्ट्री का नोबेल मिला था।

सच तो यह है कि दुनिया भर में वैज्ञानिक प्रतिष्ठानों के पुरुष-प्रधान स्वरूप के कारण महिला वैज्ञानिकों के खिलाफ पूर्वाग्रह आज भी बने हुए हैं। लेकिन उन नीतिगत बदलावों की अनदेखी नहीं कर सकते जिनकी वजह से कुछ जगहों पर महिलाओं को शिक्षा के साथ-साथ नौकरी के क्षेत्र में भी स्टेम (साइंस, टेक्नोलॉजी, इंजीनियरिंग और मैथमेटिक्स) के लिए प्रोत्साहन मिलता है। इस तरह के पूर्वाग्रह और पक्षपात रूढ़िवादी समाजों जैसे

भारत में अधिक प्रचलित हैं, भले ही हम कुछ क्षेत्रों जैसे अंतरिक्ष अनुसंधान में कुछ वरिष्ठ महिला वैज्ञानिकों को देख सकते हैं।

यह एक वैश्विक घटना है। तमाम रिपोर्ट स्टेम में महिलाओं की संख्या के बारे में थोड़ा अलग-अलग आंकड़े देती हैं, लेकिन उनमें कुछ ऐसा नहीं है जो खुशी देने वाली हो। स्टेम में महिलाओं और लड़कियों की भागीदारी में वैश्विक रुझानों पर विश्व बैंक की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि स्टेम में महिलाओं का खराब प्रतिनिधित्व हर क्षेत्र में व्याप्त है। जबकि स्नातक स्तर की दर महिलाओं में अधिक है, लेकिन वे विशेष रूप से इंजीनियरिंग, भौतिकी और आईसीटी (सूचना और संचार प्रौद्योगिकी) में स्टेम क्षेत्रों में कम पाई जाती हैं।

अधिक निराशाजनक तथ्य यह उभरा है कि स्टेम क्षेत्रों में पढ़ाई करने वाली महिलाओं के स्टेम करियर में प्रवेश करने की संभावना कम थी और पुरुषों की तुलना में इन करियर से पहले बाहर निकलने की संभावना अधिक थी। यह भी पाया गया कि स्टेम करियर में महिलाओं ने कम पेपर प्रकाशित

27.6 प्रतिशत से काफी अधिक था। रिपोर्ट ने यह नहीं बताया गया कि महिलाएं सबसे ज्यादा लाइफ साइंसेज में केंद्रित थीं। इंजीनियरिंग और टेक्नोलॉजी में उनकी मौजूदगी नगण्य थी। शीर्ष तीन भारतीय विज्ञान अकादमियों में सिर्फ 9 प्रतिशत फेलो महिलाएं हैं।

परिवार संबंधी व्यक्तिगत मुद्दे शीर्ष कारणों में से एक हो सकते हैं कि स्टेम वर्कफोर्स में कुछ ही महिलाएं हैं, लेकिन इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि महिलाओं को कार्यस्थलों में पक्षपात, पूर्वाग्रहों और व्यवस्थागत बाधाओं से जूझना पड़ता है। ऐसे पूर्वाग्रह स्टेम प्रोडक्ट्स और नवाचारों को प्रभावित करते हैं। और फिर भी कोई ये सोचने से नहीं रोक सकता कि भारत में मैरी क्यूरी या करिको जैसी फौलादी और जुनूनी महिला क्यों नहीं हैं। आखिरकार, हमारे पास पिछली शताब्दी में असाधारण महिला वैज्ञानिक और आविष्कारक रहे हैं, वह भी तब जब उनके लिए कोई अनुकूल वातावरण नहीं था। इस अति प्रदूषण वाले दौर में ऐसी ही एक असाधारण हस्ती को याद रखना

कोई यह सोचे बिना नहीं रह सकता कि भारत में मैरी क्यूरी जैसी महिला क्यों नहीं हैं। पिछली सदी में हमारे पास असाधारण महिला वैज्ञानिक व आविष्कारक रही हैं

किए और शायद आश्चर्यजनक रूप से उन्हें कम वेतन भी मिला। अंतिम आंकड़े स्पष्ट थे। 2023 की विश्व आर्थिक मंच की ग्लोबल जेंडर गैप रिपोर्ट में शामिल 146 देशों में स्टेम वर्कफोर्स का 29.4 प्रतिशत महिलाएं थीं। यह आंकड़ा केवल एंटी-लेवल वर्कर से संबंधित है। स्टेम वर्कफोर्स में उच्च-स्तरीय नेतृत्व भूमिकाओं में महिलाएं सिर्फ 12 से 17 प्रतिशत हैं। नतीजतन, उनका आविष्कार के मोर्चे पर प्रदर्शन दयनीय था। संयुक्त राष्ट्र के विश्व बौद्धिक संपदा संगठन (डब्ल्यूआईपीओ) के एक विश्लेषण के अनुसार 2022 में अंतरराष्ट्रीय पेटेंट रखने वाले आविष्कारकों में केवल 17 प्रतिशत महिलाएं थीं।

महिलाएं इतनी पीछे थीं कि वर्तमान रुझानों के आधार पर अंतरराष्ट्रीय पेटेंटिंग में लैंगिक समानता हासिल करने में उन्हें लगभग चार दशक और लगेंगे यानी 2061 तक। लेकिन भारत में एक विरोधाभास था। विश्व बैंक की सैपल स्टडी में पाया गया कि देश में स्टेम शिक्षा में 42.3 प्रतिशत लोगों का उच्चतम स्तर था, जो 2017 में अमेरिका 34 प्रतिशत, ऑस्ट्रेलिया 32.1 प्रतिशत और जर्मनी

महत्वपूर्ण है जिनका नाम है, अन्ना मणि। वह भारत में बहुत कम जानी जाती हैं, हालांकि केरल की यह महिला दुनिया के सबसे प्रतिष्ठित मौसम वैज्ञानिकों में से एक थीं।

प्रशिक्षण से भौतिक विज्ञानी मणि ने अपने शोध के जुनून को आगे बढ़ाने और महत्वपूर्ण योगदान देने के लिए कई बाधाओं को तोड़ा। उन्हें 1940 के दशक से मौसम को मापने के लिए उपकरण बनाने और वैज्ञानिकों को ओजोन परत की निगरानी करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए सबसे ज्यादा याद किया जाता है। 1964 में उन्होंने पहला भारतीय निर्मित ओजोनसॉड बनाया था।

यह एक ऐसा उपकरण जो जमीन से 35 किमी ऊपर तक ओजोन की मौजूदगी को मापता है। वह अपने समय से बहुत आगे थीं। उन्होंने दो ऐसे क्षेत्रों सौर ऊर्जा और पवन ऊर्जा में कदम रखा जो बिल्कुल नए थे। उनके जीवनी लेखक ने मणि के बारे में लिखा है, “उन्होंने एक महिला वैज्ञानिक के रूप में उन कठिनाइयों और भेदभाव को हल्का कर दिया, जिनसे उन्हें जूझना पड़ा। उन्होंने विकिटम पॉलिटिक्स का तिरस्कार किया।”

जड़ जमाती गरीबी

जलवायु परिवर्तन ने गरीबी के बाहर निकलने के दुष्चक्र को और पेचीदा बना दिया है

रिचर्ड महापात्रा

जलवायु परिवर्तन सदी की सबसे बड़ी चुनौती बनकर सामने खड़ा है। धरती के गर्म होने का नतीजा अस्थिर और विनाशकारी पर्यावरण है, खासकर दुनिया के उन सबसे गरीब लोगों के लिए जिनका वैश्विक ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में योगदान कम है। यही लोग जलवायु परिवर्तन के प्रत्यक्ष शिकार भी हैं। इतना ही नहीं, जलवायु परिवर्तन के जोखिमों ने उनकी गरीबी से बाहर निकलने की क्षमता भी कम कर दी है।

विडंबना देखिए कि जिस आर्थिक विकास को गरीबी कम करने का औजार माना जाता है, उसके लिए ही बहुत अधिक मात्रा में ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन होता है। इसी वजह से दलील दी जाती है कि गरीब और विकासशील देशों को सैद्धांतिक रूप से आर्थिक

प्रयास करती है। सबसे पहले तो दुनिया में गरीबों की स्थिति पर रिपोर्ट कहती है, “वैश्विक रूप से गरीबी घटाने की दर धीमी होकर स्थिर होने के करीब है, जिससे 2020-30 का दशक अवसर गंवा देने वाला कालखंड बनने के करीब है।” फिलहाल दुनिया की साढ़े आठ फीसदी आबादी “अत्यधिक गरीबी” यानी 2.15 डॉलर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन पर गुजर-बसर कर रही है।

इस लिहाज से दुनिया इस आबादी को 2030 तक तीन फीसदी तक लाने के लक्ष्य तक पहुंचती नजर नहीं आ रही है। इसके बजाय, अगर इसी गति से गरीबी कम होती रही तो इस लक्ष्य को पाने में दशकों लग जाएंगे। 2030 तक के लक्ष्य को देखें तो तब तक कुल वैश्विक आबादी की करीब 7.3 फीसदी आबादी “अत्यधिक गरीब” की श्रेणी में होगी।

2021 में वैश्विक स्तर पर दुनिया की लगभग 60 फीसदी आबादी ने बाढ़, सूखे, चक्रवातों और लू जैसी चरम मौसमी घटनाओं को देखा। इस संदर्भ में देखें तो जलवायु परिवर्तन, गरीबी घटाने के लक्ष्य को चुनौतीपूर्ण बना देगा। इसमें लोगों को लंबे समय तक गरीबी के दुष्चक्र में फंसाकर रखने की क्षमता है। इसकी वजह यह है कि दुनिया के ज्यादातर गरीब जैव-ईंधन आधारित अर्थव्यवस्था पर निर्भर हैं और दुनिया के करीब 66 फीसदी गरीब जीवनयापन के लिए खेती पर निर्भर है। इससे वे जलवायु के झटकों के प्रति और संवेदनशील हो जाते हैं।

विश्व बैंक के अनुसार, “चरम मौसमी घटनाओं की वजह से पांच में से करीब एक व्यक्ति को कल्याणकारी योजनाओं के लाभ से वंचित होना पड़ेगा, जिससे उबरने में उन्हें संघर्ष करना पड़ेगा।” इसका मतलब है कि उन्हें आजीवन जलवायु के गंभीर झटकों का सामना करना होगा।

इस तरह, प्रतीत होता है कि गरीबी उन्मूलन में नई आवश्यकताएं पैदा हो गईं और उससे निपटने के लिए बेहतर प्रयासों की जरूरत है। ऐसे में फिर यह सवाल उठता है कि क्या गरीबी उन्मूलन के प्रयास यानी आर्थिक विकास ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को बढ़ाएंगे?

विश्व बैंक की ताजा रिपोर्ट में कुछ शोधों का हवाला देते हुए तर्क दिया गया कि इसका ज्यादा असर नहीं होगा। उदाहरण के लिए रिपोर्ट एक शोध के हवाले से कहती है, “गैर-आश्चर्यजनक रूप से शोध यह सुझाव देता है कि लोगों को अत्यधिक गरीबी से निकालने के लिए जिम्मेदार प्रयास जलवायु लक्ष्यों के प्रति विरोधाभासी नहीं हैं क्योंकि कम आय वाले परिवारों का उत्सर्जन वैसे भी कम है।”

रिपोर्ट में एक अन्य शोध के हवाले से कहा गया है, “गरीबी उन्मूलन से 2019 की तुलना में 4.7 फीसदी ज्यादा उत्सर्जन होगा।” यह अलग-अलग देशों में उनकी गरीबी के स्तर, उनके आर्थिक विकास के स्रोतों और उत्सर्जन के स्तर के हिसाब से अलग-अलग है।” रिपोर्ट कहती है, “यह स्पष्ट है कि गरीबी उन्मूलन से ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन न्यूनतम है।”



इलस्ट्रेशन: योगेन्द्र आनंद / सीएसई

विकास सुनिश्चित करने के लिए ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन का अधिकार है। इस अधिकार को लेकर अमीर और गरीब देशों के बीच चल रही बहस बहुत विवादित है।

ऐसी स्थिति में क्या गरीबों को हमेशा की तरह उनकी किस्मत पर छोड़ दिया जाएगा क्योंकि हमें ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन कम करना है। इससे भी महत्वपूर्ण यह सवाल है कि क्या गरीबी उन्मूलन उत्सर्जन में बढ़ोतरी के बिना संभव है? विश्व बैंक की “द पावर्टी, प्रॉस्पेरिटी और प्लेनेट रिपोर्ट 2024” इस प्रश्न का उत्तर टटोलने का



RESIDENTIAL WORKSHOP

Decentralised Renewable Energy-based Solutions for Equitable Development

DATES: **DECEMBER 11-13, 2024**

VENUE: **ANIL AGARWAL ENVIRONMENT TRAINING INSTITUTE (AAETI), NIMLI, RAJASTHAN**

WITH EXPOSURE VISIT

Despite clear progress in its efforts to enhance energy access, India continues to witness significant gaps in the reliability and quality of power – even as energy consumption is all set to rise with a growing rural population. The intrinsic link between energy consumption, employment and livelihoods underscores the importance of integrating decentralised renewable energy (DRE) into the country's framework for employment and sustainability. By connecting DRE with livelihoods, investments in energy can translate into higher incomes and opportunities, thereby improving sustenance for rural and peri-urban communities. This approach not only enhances resilience and social security, but can also contribute to achieving multiple Sustainable Development Goals (SDGs).

Centre for Science and Environment (CSE) is offering a three-day residential workshop on DRE systems. The workshop will focus on the transformational role of DRE technologies in weak grid areas, examine the financing and policy landscape of the sector, and discuss how DRE can drive skills development and employment in rural regions.

- The course fee is inclusive of travel from Delhi to the training institute, accommodation, food, site visit, and all other workshop expenses.
- Confirmed attendees should arrange their travel in a manner so that they arrive in Delhi by 11 AM on December 10. Departure from Delhi can be scheduled for December 13 after 7 PM. CSE buses will ferry them from and to Delhi.
- Registration fee can be waived for government officials, NGOs, CSOs, village communities, panchayat officials and FPO representatives etc*

SEE THE WORKSHOP AGENDA HERE

THE WORKSHOP IS OPEN TO

- Entrepreneurs and start-ups
- Village communities and panchayat officials
- State nodal agencies
- Local NGOs working in the DRE and livelihood sectors
- Employment and business aspirants in the RE sector
- Industry professionals and service providers

COURSE FEE

Indian participants

**RS 21,000
PER HEAD**

Foreign participants

**US \$300
PER HEAD**

KEY THEMES

- Policy landscape of the DRE sector -- current regulatory frameworks and policy challenges for DRE implementation
- Potential of DRE technologies to create jobs and build skills in rural communities
- DRE-livelihood technologies -- application of solar-powered devices for enhancing rural productivity and livelihoods
- Transformational role of DRE appliances in weak-grid areas -- how can DRE bridge the energy access gap in remote locations
- Financing landscape of the DRE sector -- exploring investment trends and financial solutions for scaling DRE projects

*Cost of travel to Delhi from home destinations and back is to be borne by the participant/trainee or by the nominating authority.

PARTICIPANTS WHO COMPLETE THE WORKSHOP WILL BE AWARDED A 'CERTIFICATE OF COMPLETION' BY CSE.

FOR FURTHER DETAILS, PLEASE CONTACT

Binit Das, Programme Manager, Renewable Energy Unit, CSE | Mobile: +91 80933 26269 | Email: binit.das@cseindia.org

Note: Registration is not a guarantee of acceptance of admission in the programme. Please apply early as the number of seats available is limited.

Down To Earth

YouTube channel

650,000

subscribers



▶ Subscribe



to common sense...

visit <https://youtube.com/c/downearthmagazine>